

363

373/H





# शुभ उपदेश

लेखक

महात्मा १०८ स्वामी हरनाम दास जी



प्रकाशक :

तारा वन्ती सुपुत्री सरदार मोतीराम जी स्वर्गवासी

बाजार मुबारक मण्डी, मुहल्ला सरदारां, जम्मू तवी ।

# निवेदन

महात्मा १०८ स्वामी हरनामदास जी का प्रसाद मुझे कहीं से मिला । बहुत ही दिल को प्रसन्नता हुई ये छोटी सी पुस्तक मेरे से सब पढ़ने को ले जाते मुझे देते नहीं थे मुश्किल से मैं वापिस लाती थी मेरे दिल में ख्याल आया कि मैं अपनी बहनों के लिये श्रीमान् महात्मा जी की याद में छोटी सी पुस्तक प्रसाद के रूप में छपवाऊँ जो कि महात्मा जी के शांतरूपी उपदेश से पढ़ कर सबको शांति प्राप्त हो मुझे उमीद है कि मेरी बहनें पढ़ कर शान्ति प्राप्त करेंगी ।

मूल्य
हरि स्मरण

आपकी दास
तारा वन्ती

# भूमिका



जो जो दुनियां में दुःख होता है, मोह करके होता है। मोह रूपी दुःख की निवृति और किसी उपाय से नहीं होती। एक वैराग्य से ही मोह नाश होता है क्योंकि मोह से ही तृष्णा लोभ आदि आसुरी गुणों की अनन्त शाखें हृदयरूपी वृक्ष में फैल जाती हैं और आत्म आनन्द भी राग वासना से ढका रहता है।

राग से रहित हृदय उज्ज्वल प्रकाशमान होता है। मोह करके ही अति दीन कङ्गाल जीव संसार में दुःख भोगता हुआ छूट नहीं सकता, पूर्ण सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती और पुनः पुनः मृत्यु के दुःखों से भी नहीं छूट सकता। जब तक पूर्ण सुख निरावर्ण न होवे तब तक सर्व दुःखों की निवृति रूप असल शांति नहीं हो सकती। पूर्ण सुख की प्राप्ति में अज्ञान के सहित राग अर्थात् मोह ही प्रतिबन्धक है। राग की निवृति वैराग्य के बिना नहीं होती। वैराग्य तब होता है जब वैराग्यवान पुरुषों की सगत और अभ्यास करे अथवा वैराग्यवान पुरुषों की कथा सुने जैसे लड़ाई में कायर पुरुष भी सूरमाओं के दर्शन और बहादुरी को देख कर अथवा सूरमाओं की बातें सुन कर कायर भी सूरमा हो कर युद्ध करने लग पड़ता है और शत्रु को मार कर जय को प्राप्त होता है, वैसे ही अनादि काल का जीव मोह करके ज्ञान साधन से कायर हुआ ' तृष्णा आदि दुःखों से दुखी पुनः पुनः मृत्यु को अनुभव करता हुआ यह कायर जीव भी जब सत्सङ्ग रूपी रण में जाता है तब जागता है। जैसे घोड़ा रण में जाकर सोया हुआ जागता है वैसे ही अज्ञान रूपी नींद से सोया हुआ जीव भी सङ्गत रूपी रण में जाता है तब जागता है, और धर्मी पुरुषों

की कथा सुनकर धर्म में तत्पर हो जाता है, वैराग्यवानों के दर्शन से अथवा वैराग्यवानों की कथा सुनकर हृदय में वैराग्य अवश्य पैदा हो जाता है और ज्ञान के साधन में तत्पर हो जाता है, दुखों का मूल अज्ञान के सहित मोह को नाश करता है और सत्संग रूपी रण में जिज्ञासु रूपी सूरमा वैराग्य रूपी शस्त्र से राग का नाश करता है। मोह शत्रु के नाश होने ए काम क्रोध आदि आसुरी संस्कार सब नाश हो जाते हैं। इससे इस मोहजीत राजा की कथा सुनकर अभ्यास से राग रहित हुआ जीव ज्ञान से मोक्ष सुख को पाता है इससे जिज्ञासु जन मोह शत्रु को जीतने के लिये श्रद्धा सहित मोहजीत राजा की कथा को श्रवण करें।

ॐ शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

—सन्त हरनाम दास

॥ ॐ ॥

# साखी प्रमाण

अर्थात्

# निर्मोह राजा की कथा

दोहा—सर्व शुद्ध सो आत्मा, सर्व कल्पनातीत।
सत् आत्मानन्द को, नमो होय नित चीत॥
नमस्कार सतगुरु को, चरण कमल सुख खान।
चेतन शुद्ध स्वरूप से, व्यापक मध्य जहान॥

प्रथम निर्मोह राजा ब्रह्मवेत्ता महात्मा के पास जाता था। एक दिन राजा ने महात्मा से प्रार्थना की, हे भगवन् इस दुःख रूप संसार से किस प्रकार कल्याण होवे सो उपाय बताइये। तब महात्मा ने मन में विचार किया। ये राजा है इसके अन्तःकरण में मल विक्षेप आदि दोष है, इस लिये इसको अभी निर्गुण सरूप का उपदेश करना योग्य नहीं इस वास्ते महात्मा राजा को कहते भये कि व्यवहारों से उदासीन होकर बारह वर्ष अभ्यास करो।

तब निर्मोह राजा ने बारह वर्ष अभ्यास किया और फिर — वास्ते उसी ब्रह्मवेत्ते महात्मा गुरुजी के पास राजा जाता

महात्मा ने परीक्षा के वास्ते ताड़ना की। तब राजा उठकर चला आया, मगर रात भर राजा के मन में क्षोभ होता रहा। सुबह विचार करने लगा-हे मन तेरे ही में दोष है, सन्त तो सब पर कृपा करते हैं। इस प्रकार राजा ने अपना चित्त शान्त किया। फिर दूसरे दिन महात्मा के पास राजा गया, तब महात्मा ने पूछा चित्त कैसे रहा? तब राजा ने कहा जी आप की ताड़ना का सारी रात क्षोभ मन में होता रहा, प्रातःकाल चित्त शान्त हुआ। तब राजा हाथ जोड़कर कहने लगा, हे भगवन् इस दुख रूप संसार की निवृति के कारण ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति करो, मैं आपका दास हूं जी, आप दया के समुद्र हो जी, दास पर कृपा कीजिये तब महात्मा ने कहा अभी तेरा चित्त मलीन है बारह वर्ष और अभ्यास कर। तब राजा ने बारह वर्ष ब्रह्मचर्य के सहित और अभ्यास किया। तब महात्मा ने एक भक्त को कहा, राजा की परीक्षा करनी है। जब राजा बाज़ार में जावे तब राजा के ऊपर एक टोकरा राख का डाल देना।

जब राजा बाज़ार में जा रहा था, उस भक्त ने चौबारे से राजा के ऊपर राख का टोकरा डाल दिया। तब राजा को बहुत क्षोभ हुआ, जब जाकर स्नान किया और बैठ कर विचार करने लगा कि शरीर भी राख है, राख के ऊपर राख पड़ गई तब क्या हुआ इस प्रकार मन को शान्त करता हुआ राजा महात्मा के पास गया; दण्ड-वत प्रणाम करके बैठ गया।

महात्मा ने पूछा-राजा चित्त कैसा रहा। तब राजा ने कहा (जी) स्नान करते तक क्षोभ रहा फिर विचार से चित्त शांत हुआ। तब महात्मा जी कहने लगे अभी तुम्हारे चित्त में मलीनता है, बारह वर्ष और अभ्यास करो। तब राजा ब्रह्मचर्य को धारण कर के

इन्द्रियों का संयम करता हुआ बारह वर्ष और अभ्यास करने लगा। जब छत्तीस वर्ष विधि पूर्वक अभ्यास सम्पूर्ण हुआ तब राजा का चित्त अत्यन्त शुद्ध हुआ।

तब महात्मा जी ने परीक्षा करने के लिये लड़कों से कहा कि जब राजा जाता हो तब उसके ऊपर मिट्टी डाल देना। तब लड़कों ने राजा के ऊपर बहुत सी मिट्टी डाली परन्तु राजा को कुछ भी क्रोध अथवा क्षोभ न हुआ। तब राजा स्नान करके शांत चित्त से विचार करने लगा, अपने मन से कहने लगा कि हे मन शरीर भी मिट्टी है, मिट्टी के ऊपर मिट्टी पड़ गई तो क्या हुआ। हे मन अभी कसूर है तेरे साधन में अभी देर है। ऐसे विचार करता हुआ शांत चित्त से राजा महात्माजी के पास जाकर दंडवत प्रणाम करके बैठ गया। तब महात्मा जी ने राजा का चित्त अत्यन्त शुद्ध देख कर महात्मा ने राजा को ज्ञान का प्रकाश कर दिया। राजा को अपने पूर्ण स्वरूप का अपरोक्ष निश्चय और जगत का अत्यन्त अभाव निश्चय हुआ तब महात्मा की आज्ञा से राज राज करने लगा। निर्मोह राजा ने अपने सर्व कुटुम्ब को ज्ञान कर दिया क्योंकि सर्व कुटुम्ब के साधन पूर्व जन्म के परिपक्क थे इसलिये सर्व सम्बन्धी ज्ञानवान होते भये।

तब राजा का लड़का एक दिन बाहर जंगल में एक तपस्वी की कुटी पर गया। नमस्कार करके तपस्वी जी के पास बैठ गया। तब तपस्वी ने पूछा तुम किसके बेटे हो। तब लड़के ने कहा कि मैं निर्मोह राजा का बेटा हूं। जी, तब तपस्वी कहने लगा कि तुम झूंठ बोलते हो, गृहस्थ में राजा होकर कैसे निर्मोह हो सकता है। तब लड़के ने कहा सारा कुटुम्ब ही निर्मोही है। हे तपस्वी जी आप जाकर

सबकी परीक्षा करलो। तब आप को निश्चय हो जावेगा। तब तपस्वो निर्मोह राजा के कुटुम्ब की परीक्षा लेने के लिये शहर को गये। राजा का लड़का कुटी पर बैठ गया। जब तपस्वी महल के दर्वाज़े पर पहुँचा तब राजा की बांदी मिली। इसको शेर के ज़रिये से लड़के के मरने की खबर सुनाई।

तपस्वी का वचन

दोहा—सुन तू चेरी श्याम की, बात बतावें तोहि।
कुवंर बिनास्यो सिंह च, आसन पड़ियो मोहि॥

अर्थ—हे बांदी राजकुमार को शेर ने मार डाला है, और लोथ कुटी पर पड़ा है।

बांदी का वचन

दोहा—ना मैं चेरी श्याम की, ना कोई मेरा श्याम।
चार दिवस के कारने, सुनो ऋषि अभिराम॥

हे तपस्वी जी न मैं किसी की टहलन हूं न कोई मेरा स्वामी है चार दिन का मेला झूठा स्वप्न के समान है। जन्म मरण संयोग वियोग इन्द्र जाल की तरह सब झूठा है। हे तपस्वी जी! मैंने इस संसार के बड़े दुख देखे हैं आपको संक्षेप कर सुनाती हूँ तू सुन! इस दुखरूप संसार के पदार्थ देखते २ नाश हो जाते हैं, मैं स्वप्न की तरह जानती हूँ इसी से मेरे को किंचित मात्र भी शोक नहीं हुआ, मैं पहिले एक सौदागर की स्त्री थी, मेरा पति परदेश चला गया, मैं एक दिन नदी पर स्नान कर रही थी तो एक राजा घोड़े पर सवार हुआ जा रहा था, उस कामी राजा की नज़र मेरे ऊपर पड़ गई, वह कामी राजा मुझ को घोड़े पर चढ़ा कर अपने शहर को ले गया, मैं पतिव्रत धर्म पालन करने के लिये एक वर्ष का संकेत कर के

अलग महल में रहने लगी, पीछे से मेरा लड़का रुदन करता हुआ परदेश को चला गया मेरे पति के माता पिता भी मर गये, जब मेरा पति घर में आया तो घरको बरबाद देखकर रुदन करता हुआ लोगों से पूछने लगा। लोगों ने कहा तुम्हारी स्त्री को एक राजा ज़बरदस्ती ले गया है, तुम्हारे माता पिता मर गये हैं और तुम्हारा लड़का कहीं परदेश चला गया है तब ऐसी हालत सुनते ही मेरे पति बहुत दुखी होकर रोने लगे और मेरी तलाश करते हुए मुझ को महलों में आ मिले और बहुत रोने लगे। तब अपने पति से मैंने कहा कि मैं आपके धर्म में हूं, आप श्मशान भूमि में जा बैठिये मैं रात को आपके पास आ जाऊंगी। तब मेरा पति श्मशान में जा बैठा, उसी वक्त उसे सांप ने डस लिया और वह मर गया। और जब मैं रात को श्मशान भूमि में गई, वहां जाकर देखा कि मेरा पति मरा हुआ पडा है, मैं बहुत दुःखी होकर रोती हुई जंगल को चली, तब हमारे ज़ेवर चोर छीन कर ले गये ! और मैं निराश होकर भगवान् के आगे बारम्बार पुकार करती भई। हे भगवन् हमारा कष्ट निवारण कीजिये ! मैं अनाथ आप की शरण हूं ! इस प्रकार भगवान् का चिन्तन करती हुई चली जाती को दो रोज़ होगये। तब एक शहर में जा पहुंची, दो रोज़ की भूखी कुछ खाने को मिला नहीं। तब लोगों ने कहा शहर से बाहर नदी किनारे अन्न का क्षेत्र है, वहां तुमको भोजन मिल जावेगा। तब मैं वहां जाकर क्षेत्र से भोजन लेती भई। भोजन किनारे पर रखकर नदी में स्नान करने लगी तो पानी ज़ोर से चल रहा था, हमारा शरीर निर्बल था, नदी में बह गई। तब आगे एक गूजर ने मेरे को निकास कर वहिन भावना से घर ले गया। तब गूजर के घर मैं दूध बेचती रही (१०) याते हे तपस्वी जी ! ऐसा विचार कर के मेरे को मोह नहीं हुआ। तब तपस्वी अपने मन में कहने लगा यह

तो बांदी है इसको क्या मोह होगा, लड़के की स्त्री को जरूर मोह होगा। उसकी परीक्षा करने के लिये तपस्वी स्त्री के महल में जाता गया।

तपस्वी का वचन

दोहा—सुन तू बाला सुन्दरी, अबला जोबन वान।
देवी वाहन बलि मल्यो, तुम्हरो श्रीभगवान ॥

अर्थ–हे सुन्दरी तुम्हारा पति देवी की सवारी (शेर) ने मार दिया है।

स्त्री का वचन

दोहा—तपिया पूर्व जन्म की, क्या जानत यह लोग।
मिले कर्मवश आनहम, अब विधि कियो वियोग ॥

अर्थ—हे तपस्वी पूर्व जन्म के कर्मों को लोग नहीं जानते क्योंकि पिछले कर्म से मेरा पति के साथ मेल हुआ था, अब लेना देना भुगत चुका है। अब ब्रह्मा ने वियोग कर दिया तो इस में क्या अफसोस है, कल्पित शरीरों के कर्मों अनुसार अवश्य संयोग से वियोग होना ही था।

तपस्वी का वचन

हे सुन्दरी! तैने पति के मरने का कुछ भी शोक नहीं किया। तेरा चित्त बड़ा कठोर है, पतिव्रता धर्म तेरा वृथा है।

दोहा—बेमुख नारी पति से, बानी कटु अलाय।
दुख पावे इस लोक में, अन्त नर्क में जाय ॥
आज्ञा पाले पति की, नारी शील सुभाय।

सुख पावे इस लोक में, अन्त मुक्ति को पाय ॥
रोगी वृद्ध जड़ अंध जो, तृष्णा क्रोध महान ।
पति ऐसा जिस होय जो, करत नारि अपमान ॥
पावें दुःख अनन्त सो, जम पकड़े जब आन ।
निश्चय नर्क सो भोगती, कभी न हो कल्यान ॥
पतिव्रता जग चार हैं, भाषे वेद पुरान ।
उत्तम मध्यम कनिष्ट जो, चौथी अधम पिछान ॥
उत्तम नारि पतिव्रत सो, जिसके मन बस होय ।
व्रत नेम सब धर्म जो, प्रेम चरण में सोय ॥
मन बाणी काया सभी, प्रेम पति में मान ।
दूजा पुरुष न देखती, सुपने में भी आन ॥
जग में मध्यम नार जो, पर पति ऐसे जान ।
बड़ा बाप सख छोटा सुत, भाई आप समान ॥
विचारे धर्म कनिष्ठ तिय, मत कुल लागे दाग ।
अधमनार पर पत बचे, बिन अवसर भय लाग ॥
छल करती जो पति से, पर पुरुषों में प्रीति ।
रहे कल्प शत नर्क में, तुच्छ विषय में चीत ॥
बिन साधन से पाइ है, पति सेवा से मोच्च ।
पति धर्म छोड़ के, कभी न होवे तोछ ॥
दुख पावे सौकोटि जन्म, होई जो पति प्रतिकूल ।

विधवा होवे तरुन में, कहते वेद समूल ॥
अति अपावन नारि जो, करे पति की सेव।
चा वेद यश गावते, परम गति को लेव ॥

अर्थ—जो स्त्री पति का आज्ञा नहीं मानती और पति से लड़ाई करती है वह नर्क में दुख भोगती है और इस लोक में बुराई होती है, जो नारी पर पुरुष से व्यभिचार करती हैं, वह तपे हुये लोहे के थम्बों (खम्भों) से लगाकर जलाई जाती हैं, जो स्त्री पति की आज्ञाकारी हैं, अपने घर के अन्दर ही बैठ कर समय गुज़ारती हैं, बाहर नहीं निकलतीं, आंखों से भी परपुरुष को नहीं देखतीं, चलते समय सदा ज़मीन की तरफ ध्यान रखती हैं, पति को ईश्वर रूप समझ कर हर रोज़ प्रातःकाल उठकर नमस्कार करती हैं, पति के पवित्र चर्णामृत आचमन करती हैं और सदा भगवान् भावना से सेवा पूजन करती करती हैं, उस पतिव्रता स्त्री का इस लोक में यश होता है और बैकुण्ठ लोक में सुख भोगती हैं। जो स्त्री पति के साथ सती हो जाती है उसको साठ करोड़ वर्ष सूर्य लोक में सुख मिलता है। जब यह विचार तपस्वी ने सुन्दरी को सुनाया तब सुन्दरी कहने लगी :—

सुन्दरी का वचन

हे तपस्वी जी! आपने पतिव्रता स्त्री के धर्म कहे हैं सो शास्त्र के अनुसार सब ठीक हैं परन्तु जो स्त्री अपने पति भगवान् को उत्पत्ति नाश वाला परिछिन्न जान करके सेवा करती हैं और उत्तम लोक आदि स्वर्ग सुख की इच्छावान हैं उनको पति की प्रेम से सेवा श्रद्धा पूर्वक करने से उत्तम लोक के सुख मिलते हैं और जो निष्काम भावना से पतिव्रता स्त्री मुक्ति पद के पावने के वास्ते पति की सेवा श्रद्धा प्रेम से करती हैं, उनको पूर्ण ब्रह्मस्वरूप का ज्ञान हो जाता है।

है। हे तपस्वी जी मैं तो अपने पति को पूर्णब्रह्म जान कर निष्काम भाव से मुक्ति पद के लिये श्रद्धा प्रेम से सेवा करती रहती हूँ और हमारा पति ज्ञानवान था, उसने हमारे को ज्ञान कर दिया है। अब हमारे को पति परिपूर्ण उत्पत्ति नाश से रहित चेतन रूप से दिखाई देता है, ऐसी ज्ञान भावना से मन करके मैं पति भगवान् की सदा सेवा करती रही हूँ और बाहर शरीर करके स्नान कराना, चरण धोने, भोजन खिलाना इत्यादि पति भगवान् के शरीर की सेवा भी मैं दासी होकर शरीर करके करती रही हूं परन्तु वास्तव से पति भगवान् मेरा स्वरूप है, मैं पति का स्वरूप हूँ एक चेतन सर्व आत्मा निश्चय होने से। इस लिये ज्ञान अग्नि करके यह देह आदि जगत भस्म हुआ है। ज्ञान से शरीर की निवृति, यही शरीर को सती होना फलरूप है मेरे को उत्तम लोक के सुख आत्मा सुख रूपी समुद्र में तरङ्गों के समान दिखाई देते हैं। इस लिये हमारे को उत्तम लोक की इच्छा नहीं है। हमारा मन पूर्णब्रह्म सुख रूप आत्मा में लीन हुआ है, हमारा पति देह से भिन्न चेतन स्वरूप हमारा आत्मा है, अजर अमर है, सर्व शरीर रूपी तरङ्ग कल्पित निश्चय होने से इस कारण हमारे को शोक नहीं हुआ। हे तपस्वी! जिन स्त्रियों को ब्रह्म ज्ञान नहीं हुआ वह स्त्रियां अपने को और पति को देह मात्र ही जानती हुइ मोह के वश में पति के वियोग से इस प्रकार विलाप करती हैं।

दोहा—जम पकड़ कर ले गये, घर की रोवत नार।
पति मुसाफ़िर हो गया, कौन लेवेगा सार॥
लघु सुख संजोग में, बिछड़े दुःख हजार।
बेटी बेटा मित्र जो, रोवत ज़ार बेज़ार॥

हे तपस्वी ! जिन स्त्रियों को देह अभिमान है वह पति के शरीर के वियोग से रुदन करती हैं, जो पति की सेवा करती हैं वह सदा सुख भोगती हैं, जो पति को दुख देती हैं वह सदा नरक भोगती हैं।

**दोहा—अनेक योनियां पावते, स्वर्ग नर्क बहु रङ्ग।**
**बार बार दुख भोगते, देह अभिमान जो सङ्ग ॥**

अर्थ—जो अज्ञानी जीव देह का अभिमान करते हैं वह अनेक योनियां पावते हैं और मेरा देह अभिमान निवृत हुआ है इस विचार से पति के शरीर की मृत्यु का शोक नहीं करो। यह तो पूर्व के कर्म से कल्पित शरीरों का संयोग होता है। जब पिछला लेना देना खतम हो जाता है तब वियोग हो जाता है। इस पर मैं आपको एक उदाहरण सुनाती हूं जिसके सुनते ही सर्व मोह शोक नाश होते हैं।

एक कर्मलम्ब ब्राह्मण था उसके घर में बेटा पैदा हुआ। कर्मलम्ब ने पत्री देखी तो मालूम हुआ कि इसने हमारा कर्ज़ा देना है। तब कर्मलम्ब ने बेटे का नाम ऋणदत्त रख दिया। जब कर्ज़ा उतर जायेगा तब यह बेटा मृत्यु हो जावेगा। जब वह बड़ा हुआ तब सर्व विद्या पढ़ गया और कर्मलम्ब को यह भय था कि जब किसी सभा से या राजा से धन ले आया तब उसी वक्त लड़का मृत्यु हो जावेगा तब अपने बेटे को कहता भया, किसी सभा या किसी राजा से धन कभी मत लेना, एक दिन कर्मलम्ब दूसरे शहर की सभा में चला गया तब पीछे से एक ब्राह्मण विदेशी राजा के पास आ गया तब ब्राह्मणों की सभा लगी शास्त्रार्थ होने लगे और ऋणदत्त भी सभा में चला गया। शहर के ब्राह्मण तो हार गये और कर्मलम्ब के बेटे ऋणदत्त ने उस ब्राह्मण को जय कर लिया तब ऋणदत्त के ऊपर शहर के ब्राह्मण

प्रसन्न हुये और राजा भी बड़ा प्रसन्न हुआ। ऋणदत्त को राजा ने अपने पास बैठा लिया तब राजा ने दो थाली मोहरों की ऋणदत्त के आगे भेंट रखीं। ऋणदत्त ने एक थाली तो विदेशी ब्राह्मण को दी जो हार गया था और दूसरी थाली मोहरों की शहर के ब्राह्मणों को बांट दी। तब राजा ऋणदत्त के ऊपर बहुत खुश हुआ। ऋणदत्त ने कुछ भी अङ्गीकार नहीं किया, भोजन भी अपने घर आनकर खाया। तब राजा अपने घर जाकर ऋणदत्त लड़के का जय जयकार का समाचार अपनी रानी को सुनवाते भये और ऋणदत्त लड़के की बहुत उपमा करी तब रानी ने राजा को कहा कि अपनी सुन्दर कन्या ऋणदत्त लड़के को दान दीजिये, हमारी सुन्दर कन्या सुख पावेगी। तब राजा ने रानी की बात को स्वीकार करके उसी वक्त राजा सगाई का सामान तैयार करके कर्मलम्ब ब्राह्मण के घर भेजता भया। बारह गांव का पट्टा कर दिया और चार हीरे, पांचसौ मोहरें और वस्त्र भूषण इतना धन राजा भेजता भया। ऋणदत्त को सगाई का सामान मिला, तब ऋणदत्त अपनी माता को देता भया तब उसी वक्त ऋणदत्त मृत्यु को प्राप्त होता भया। माता बेटे की मृत्यु को देखकर बहुत रोने लगी और ऋणदत्त का पिता कर्मलम्ब भी बाहर से आ गया। धन की प्राप्ति और बेटे की मृत्यु देखकर रोने लगा और कहता भया। शास्त्र की बात आज दिन सफल हो गई कि बेटा हमारा कर्ज़ देकर परलोक को चला गया और लोग भी कर्मलम्ब ब्राह्मण के पास जाकर अफसोस करने लगे। उधर राजा की कन्या पति की मृत्यु सुनकर विचार करने लगी, जिसका पति मृत्यु हो गया उस स्त्री का दुनियां में जीना बृथा है इस लिये मृत्यु ही हो जाना श्रेष्ठ है। ऐसा विचार कर उस राजा की कन्या ने भी प्राण त्याग दिये। तब कर्मलम्ब ब्राह्मण और उसकी स्त्री दोनों अपने सुन्दर

बेटे के वियोग से संसार को दुःख रूप जानकर सर्व धन का दान करके भजन करने के वास्ते बन को जाते भये। इस प्रकार स्त्री उदाहरण सुनाकर तपस्वी को कहती भई। हे तपस्वी जी, ऐसे ही जब परस्पर लेना देना खत्म हो जाता है तब उसी वक्त जीवों का वियोग हो जाता है।

विचार से देखिये तो आत्मा का कभी वियोग नहीं होता, जन्म मृत्यु शरीरों के धर्म हैं, आत्मा सबका एक है और परिपूर्ण है। हमारे पति ने इस प्रकार हमारे को ज्ञान सिखलाया हुआ है। आत्मा जन्म मरण रहित है, सर्व का स्वरूप है, अजर अमर अखंड है, कर्म वायु से कल्पित शरीर रूपी तरङ्गों के जन्म मृत्यु होते रहते हैं, कल्पित झूठे जड़ शरीरों के संयोग वियोग से शोक करना वृथा है, आत्मस्वरूप हमारा और पति का एक है सो अमर है, उसका कभी जन्म मृत्यु नहीं होता है। हे तपस्वी जी इस विचार से पति के शरीर की मृत्यु सुनकर हमारे को मोह शोक नहीं हुआ। अब तपस्वी कहता भया हे देवि! पिछले जन्म ऋणदत्त और कर्मलम्ब कौन थे और किससे कर्ज़ा लिया था यह सब समाचार हमारे को सुनाइये। तब स्त्री कहती भई हे तपस्वी जी! उन सभा वाले ब्राह्मणों का राजा वा रानी का, राजा की कन्या का और कर्मलम्ब व ऋणदत्त का इन सब का वृतान्त सुनाती हूँ तुम सुनो। एक वैश्य था वह अपने कुटुम्ब सहित तीर्थ यात्रा करता २ मथुरा के पास आया। तब जंगल में एक तपस्वी की कुटिया के पास रात को निवास करता भया। सुबह हुई तो अपनी स्त्री को कहने लगा कि आपां बनारस को जाना है, रस्ते में चोरों का डर है, ठग चोर रास्ते में बहुत हैं इसलिये कुछ धन इस तपस्वी के पास अमानत रख दीजिये। तब स्त्री ने कहा सत बचन, हे भगवन् आप ने बहुत अच्छा विचार किया है। तब उस वैश्य ने

चार हीरे, पांच सौ मौहरें और बारह गांव का पट्टा इत्यादि तपस्वी के पास अमानत रख दिया और कहता भया कि मैं बनारस की यात्रा कर के यह धन आपसे लेता जाऊंगा। तब तपस्वी ने केवल परोपकार समझकर धन को रख लिया और अपनी चेली को कहा इस धन को अपनी कुटिया में रख लीजिये। तब दासी अपनी कुटिया के अन्दर वैश्य का धन रखती भई और वैश्य बनारस को चला गया। तब एक महीने के बाद तपस्वी बीमार होता थया, तब तपस्वी अपने विद्यार्थियों से पूछता भया, वैश्य का धन कहां रखना चाहिये। हमारा काल नज़दीक आ गया है। तब विद्यार्थियों ने कहा-आपके पास ऋषि बैठा है इसको दे दीजिये, यह ऋषि मथुरा में सेठ के पास रख देवेगा। तब तपस्वी ने सब धन दासी से लेकर ऋषि को दे दिया। ऋषि ने मथुरा के सेठ के पास धन को अमानत रख दिया तब तपस्वी मृत्यु होता भया और इधर से वैश्य यात्रा करता हुआ उसी तरफ सहित कुटुम्ब के कालवश होता भया और मथुरा का सेठ और सेठानी भी कुछ काल पाकर मृत्यु होते भये और तपस्वी की दासी और विद्यार्थी और ऋषि वह सभी कुछ काल पाकर अपने २ समय पर सब मृत्यु को प्राप्त होते भये। हे तपस्वी जी वह वैश्य जो बनारस का यात्रु था सो मर कर के कर्मलम्ब ब्राह्मण होता भया, तपस्वी कर्मलम्ब ब्राह्मण का बेटा ऋणदत्त होता भया और मथुरा का सेठ सेठानी राजा रानी होते भये और दासी मरकर राजा की कन्या हुई और विद्यार्थी मरकर शहर के ब्राह्मण बने और ऋषि विदेश का ब्राह्मण हुआ जो हार गया था। हे तपस्वी जी इस प्रकार अपने २ कर्म के अनुसार सबका संयोग होकर फिर वियोग हो जाता है, कर्मों की आश्चर्य गति है लखी नहीं जाती। तब तपस्वी ने पूछा हे देवि, वह राजा की कन्या मरकर कहां गई और ऋणदत्त मरकर कहां गया।

तब स्त्री कहती भई, वह राजा की कन्या मैं हूं और ऋणदत्त हमारा पति है, अब हम दोनो को ज्ञान हुआ है अगाड़ी हम दोनों का जन्म नहीं होगा, दोनों ब्रह्म स्वरूप में अभेद हुए हैं निस्संशय पूर्णस्वरूप का अपरीक्ष हुआ है। तब तपस्वी धन धन करता हुआ लड़के की बहन के पास जाता भया और मन में विचारा कि बहन को भाई की मृत्यु सुन कर मोह जरूर होगा, तिसकी परीक्षा के लिये बहन को कहता भया।

तपस्वी का वचन

दोहा—राजसुता सुन बात मम, करे जो दिलको शोर।
वीर बिनास्यो बने में, सिंह शूरमें तोर॥

अर्थ हे राजा की बेटी एक बात सुन जिस के सुनते ही तेरे दिल को बड़ा शोक हो जावेगा, तेरे भाई को बन के बीच शेर ने मार डाला।

बहन का उत्तर

दोहा—बन में मरते जीव बहु, रचे जो ईश अनन्त।
शोक करूं मैं कौन का, जाओ कुटी तुम सन्त॥

अर्थ-हे तपस्वी जी, इस संसार में ईश्वर के रचे हुये जीव ही मरते जन्मते हैं, मैं कौन का शोक करूं, तुम अपनी कुटी में जाकर भजन करो।

तपस्वी का वचन

तपस्वी कहता भया बहनों को वीर प्यारे होते हैं, हे देवी तुमने भाई की मृत्यु का किस विचार से शोक नहीं किया, कोई दृष्टांत कहो।

बहन का वचन

इस संसार रूपी बन में ईश्वर रचित जीवों का जन्म मरण प्रवाह चला आता है, अथवा हे तपस्वी जैसे समुद्र में वायु से अनन्त तरङ्ग उत्पत्ति, लय होते हैं, तैसे परमात्मा रूपी समुद्र में माया वायु से अनन्त जीप रूपी तरङ्ग उदय, लय होते रहते हैं सो सब झूठे हैं, शोक करना वृथा है। हे तपस्वी जी! अब दृष्टांत सुनो जिसके सुनते ही शोक नाश होवे है। जैसे किसान खेती बीज करके फिर उसकी पालना करके छोटी बड़ी को काट लेता है, जैसे उसके काटने से अफसोस कोई नहीं करता तैसे ही ईश्वर रूपी किसान अनन्त जीव-रूपी खेती पैदा करके फिर पालना करता है, फिर अपनी मर्ज़ी से काल रूपी दरांती से काट लेता है, छोटे बड़े जीव काल रूपी दरांती से काटे जाते हैं याते परमात्मा सबका मालिक है जीव का अफसोस करना वृथा है। हे तपस्वी जी! ऐसे विचार से हमारे को भाई के मरने का शोक नहीं हुआ अथवा हे तपस्वी जी! और उदाहरण सुनो जिसके सुनते ही मोह शोक निव्रत होवे है।

एक माई शील स्वभाव से अपने पति की सेवा करके पति को प्रसन्न रखती थी। वह अपने पति को कहती भई, हे भगवन्! भजन करने से ही कल्याण होता है, और भजन करने की युक्ति महात्मा से मिलती है, आपको आज्ञा होवे तो महात्मा के पास चली जाऊं, तो पति ने कहा एक वृद्ध महात्मा बाहर कुटी में रहते हैं उनके पास जाकर दर्शन भी कर और भजन करने की युक्ति और भजन भी श्रद्धा से पूछ। तब माई अपने पति की आज्ञा से प्रसाद भेंट लेकर के शील स्वभाव से महात्मा के पास जाती भई। दर्शन करके नम्रता से हाथ जोड़ कर विनती करती भई, हे भगवन्! कल्याण कैसे होवे।

तब महात्मा बोलते भये, हे देवि ! अपने पति की आज्ञा में रहना और सदा भगवान् का भजन करना ये ही तुम्हारे लिये कल्याण का मार्ग है। तब माई कहती भई, हे भगवन् ! आप कृपा करके भजन भी बताइये, और भजन करने की युक्ति भी बताइये। तब महात्मा जी ने दया करके माई को भजन बता दिया और युक्ति कहते भये, पिछली रात एक पहर अथवा चार बजे स्नान करके नीचे आसन लगाकर सुबह के आठ बजे तक एक आसन पर अचल बैठकर भजन करना चाहिये और एक पहर अथवा तीन घण्टा शाम को एक आसन पर समाधान होकर भजन करना और भजन का समय सम्पूर्ण किये बिना किसी के साथ बात नहीं करनी और आसन से उठना भी नहीं, और निष्काम भावना से केवल भगवान् की प्रसन्नता अर्पण भजन करना। तब माई श्रद्धा पूर्वक महात्मा जी की आज्ञा से रोज़ ऐसे ही विधि पूर्वक अभ्यास करती भई। जब बहुत काल भजन करते हो गया तब पाप नाश होने से चित्त अत्यन्त समेहित होता भया। तब माई को पूर्व के जन्मों की खबर होती भई, तब एक रोज़ उसका दो वर्ष का बेटा उस माई के सामने खेल रहा था, माई भजन में तत्पर थी उस लड़के के पास काला सर्प आता भया, उस सर्प ने लड़के को काट लिया तब लड़का मृत्यु होता भया। परन्तु उस माई ने सर्प को देखा भी, मगर अपने नियम पालन के कारण अपना आसन और भजन को छोड़ा नहीं तब एक पड़ौसिन उसके घर में आई, सर्प तो भाग गया उस पड़ौसिन ने निश्चय किया कि सर्प के काटने से ही लड़का मृत्यु हुआ है। तब वह पड़ौसिन मोह वश हो· कर रोने लगी तब इतने काल तक लड़के की माई भी भजन सम्पूर्ण करके लड़के के पास आती भई। तब पड़ौसिन ने कहा हे बहिन जी ! तुम्हारा यह एक ही सुन्दर बेटा था जिसको तुम्हारे सामने सर्प

ने काटा तुमने बेटे की मृत्यु से रक्षा क्यों नहीं करी तुमको मोह क्यों न हुआ, तब लड़के की माता कहती भई, इस लड़के के और हमारे परस्पर सम्बन्ध होते हुये सात जन्म हो चुके हैं कभी ये माता बन जाता है मैं बेटा बन जाती हूं, कभी मैं माता बनती हूं ये बेटा बन जाता है, कभी ये पहिले परलोक चला जाता है कभी मैं इससे पहिले परलोक चली जाती हूं। इस प्रकार अब इसका मृत्यु पहिले हुआ है समय पर हमारी भी मृत्यु हो जावेगी, मुसाफिरों वाला मेल है इस वास्ते हे बहिन जी ! भजन करने से ही चौरासी के चक्कर से छूटता है याते उत्पत्ति नाश वाले शरीरों के वियोग से मोह करना वृथा है अथवा परमात्मा का हुक्म ऐसे ही था इस क्षण में सर्प की मौत से लडका मरना ही था। इस विचार से हमारे को मोह शोक नहीं नहीं हुआ। तब माई का विचार सुनकर पड़ौसिन शान्ति को प्राप्त होती भई। याते हे तपस्वी जी ! जैसे उस माई को भजन के प्रताप से बेटे की मृत्यु का मोह शोक नहीं हुआ तैसे हमारे को ज्ञान के प्रताप से भाई की मृत्यु सुनकर मोह शोक नहीं हुआ। काहते जैसे वृक्ष के नीचे मुसाफिर एकत्र होकर बिछड़ जाते हैं तैसे भाई, बेटा, पिता, पति आदि सम्बन्धी मुसाफिरों की तरह इकट्ठे होकर बिछड़ जाते हैं। याते सम्बन्धियों के वियोग का शोक त्याग कर भगवान् का भजन और धर्म ही दिन रात करना चाहिये और विषय भोगों से उपराम होना चाहिये। भोगों से बुद्धि मलीन हो जाती है सात्विक पुरुष तो विषय भोग त्याग करके भजन में ही सुखी होते हैं। काहते जिसके मन में विषय की तृष्णा अधिक है वह ही दुखी परम कङ्गाल है, और जिसके मन में सन्तोष है वह ही परम सुखी धनवान है।

दोहा—कामधेनु मन शांत जो, नन्दन बन सन्तोष।
अमृत सङ्गत सन्त की, होय ज्ञान ऊ मोक्ष॥

भाव ये हैं :—जब सन्तोष रूपी सूर्य उदय होता है तब इच्छा रूपी रात्रि का अभाव हो जाता है। त्रिलोकी के राजा की इच्छा निवृत्त ना भई तो वह भी दरिद्री है और जो निर्धन है और सन्तोषवान है वह सबका ईश्वर है जो अप्रापत वस्तु की इच्छा ना करे और अनइच्छित प्राप्त हुये इष्ट में राग द्वेष से रहित होकर शास्त्रानुसार वर्तना इसका नाम सन्तोष है, सन्तोष ही परापद है। सन्तोषवान सदा आनन्दमय है जो सन्तोष से रहित है, तिसके हृदय में दुःख चिन्ता उत्पन्न होते रहते हैं जैसा आनन्द सन्तोषवान को होता है ऐसा आनन्द अष्ट सिद्धि के ऐश्वर्य्य करके भी नहीं होता और अमृत के पान किये से भी ऐसा आनन्द नहीं होता जैसा आनन्द सन्तोषवान को होता है। सदा शान्त रहता है, जैसे पक्का आम सुन्दर होता है सब को प्यारा लगता है तैसे सन्तोषवान पुरुष सब को प्यारा लगता है, और स्तुति करने योग्य है। जिस पुरुष को सन्तोष प्राप्त हुआ है तिस को परम लाभ भया है। जहां सन्तोंष है तहां इच्छा नहीं रहती और सन्तोषवान भोग में दीन नहीं होता वह उदार आत्मा है सर्वदा आनन्द कर तृप्त रहता है। सन्तोष से परम शोभा होती है, जो सन्तोषवान पुरुष है तिसको देवता, मनुष्य सब नमस्कार करते हैं और धन्य धन्य कहते हैं। और सत्सङ्ग से सर्व दुःख नास होते हैं, बुद्धि उज्जवल होती है और सन्तों के दर्शन से पाप नाश हो जाते हैं, सन्तों के उपदेश को धारण करने से अज्ञान मोह निवृत्त हो जाता है, सन्तों की सेवा करने से चार पदार्थ प्राप्त हो हो जाते हैं धर्म अर्थ, काम, मोक्ष, याते सन्तों की सङ्गत, सेवा दर्शन, श्रद्धा प्रेम से सदा करनी चाहिये। याते हे तपस्वी जी! और विचार सुनो, अज्ञान रूपी मोह से ही पाप पुण्य कर्म बनते हैं जिस मोह के प्रताप से ऊट, बैल, गदहे भार उठाये फिरते हैं और दुः

पाते हैं। सर्प, कीट, पतङ्ग आदि कनिष्ठ योनियों में बारम्बार मोह करके ही भ्रमते हैं और वृक्ष आदि जीव कुहाड़े से काटे जाते हैं। ये सब मोह का ही प्रताप है। जो अज्ञानी जीव देखने में आते हैं सब मोह रूपी जाल में फंसे हुये हैं इस मोह रूपी दलदल से निकल नहीं सकते। देवता, दैत्य, मनुष्य, पशु, पक्षी आदि जीव मोह करके तीनों लोकों में कर्म वश भ्रमते हुए बारम्बार जन्म मरण को प्राप्त होते हैं, जैसे समुद्र में नदियां स्वाभाविक ही प्राप्त होती हैं, तैसे ही अज्ञानी जीवों को मोह और तृष्णा कर के स्वाभाविक ही कष्ट प्राप्त होते रहते हैं। जो स्वर्ग में कल्पवृक्ष है वह तो इच्छा करने से अनेक प्रकार के पदार्थ देता है परन्तु ये राग रूपी ऐसा कल्पवृक्ष है कि बिना इच्छा से ही अनेक प्रकार के कष्ट जीवों को देता रहता है, और जो जीव भजन भक्ति नहीं करते, राग से सदा ही विषय भोगों का यत्न करते रहते हैं, वह नरक की अग्नि में लकड़ी की तरह जलेंगे। मोह कर के अनन्त कष्ट पावेंगे और जो सात्विकी पुरुष निराश होकर भजन भक्ति प्रेम से करेंगे वह सर्व दुखों से छूटकर दोनों लोक में सुखी होवेंगे और जो मोह से चोरी, जूआ, हिंसा, झूठ, निन्दा, लोभ आदि पाप करने वाले जीव हैं वह बड़े भयानक कष्ट पावेंगे जैसे सर्प के काटे से, शस्त्र के घायल से, कोल्हू में पीड़े जाने से, अन्धकूप में गिरने से, पाषाण की वर्षा कर चूर्ण होने से इत्यादि जो बड़े बड़े भयानक कष्ट हैं सो पापी पुरुष भोगते हैं, याते पापी पुरुष का संग कभी नहीं करना चाहिये। पापी के पाप का निरूपण करने से वो ही पाप निरूपण करने वाले को प्राप्त हो जाता है याते पापी पुरुष की निन्दा ना करे और पापी पुरुष का त्याग कर देना चाहिये। अपने शरीर पर कष्ट सहन करे परन्तु खोटे पुरुष की सङ्गत कभी ना करे। यद्यपि बड़ा बुद्धिमान भी होवे परन्तु विषयों में राग करने से लघुता

को प्राप्त हो जाता है और विषयों के उपराम होने से लघु पुरुष भी पूजने योग्य बड़ा हो जाता है और जैसे कीट आदि अपवित्र मूत्र आदि मैले स्थान में प्रीति पूर्वक प्रसन्न रहते हैं तैसे सकामी पुरुष भोगी जीव भी अपवित्र मैले जो विषय भोग हैं तिनमें प्रीति करते हुये प्रसन्न रहते हैं। किसी पुण्य से मिला जो मनुष्य शरीर का अमूल्य समय सो नाशवान भोगों में निष्फल कर देते हैं। मूर्ख तृष्णावान् भोगी पुरुषों को अन्त समय पश्चाताप करना पड़ेगा। सकामी पुरुषों की इच्छा के बल से ईश्वर उनको स्त्री आदि अपवित्र भोग देता है जिनके मोह से जीवों को दुःख ही होवे है और जो मोक्ष की इच्छावान् निष्काम पुरुष हैं तिनको भगवान् पवित्र वस्तु भजन और विचार में लगा देता है तिस करके परमानन्द की प्राप्ति होवे है। हे तपस्वी जी! जो सात्विकी निष्काम पुरुष हैं भगवान् की भक्ति में लगे हुये हैं उनके लिये यह पवित्र विचार मैं तुम्हारे को सुना रही हूँ यह पुण्यरूप विचार है जिसके सुनते ही जीवों के पाप नाश होवें हैं।

विचार यह है :—दोपहर का सूर्य्य प्रकाश न करे तो न करे परन्तु जो सबसे उदासीन हो के अभ्यास करेगा तो उस की जड़ चेतन माया दासी अवश्य होवेगी। और विचार ये हैं :—दुखियों पर दया करनी, क्षमा धीरज आदि से चित्त शुद्ध होवे है। चित्त की शुद्धता से उपरती रूप पुण्य बढ़ै है अथवा यम नियम आदि साधनों से परम सुख की प्राप्ति होवे है। और इस जगत में सुखी दुखी सर्व जीवों को धर्म ही करना चाहिये। सुखी पुरुष धर्म करेगा तो उसका सुख बढ़ जावेगा। दुखी पुरुष जो धर्म करेगा तो उसका दुख नाश हो जावेगा। याते धर्म ही परम तीर्थ है, धर्म ही परम तप है, धर्म ही जीव का परम मित्र है धर्मी पुरुष ही परमानन्द को प्राप्त होवेंगे।

जो पुरुष धन को धर्म में नहीं लगाते उनका धन अग्नि से नाश हो जावेगा। राजा भी उनका धन छीन लेगा और चोर डाकू लूट ले जावेंगे। और जो पुरुष दशवां अंश धन का धर्म में लगाते रहते हैं उनके पाप नाश होने से धर्म के प्रताप से राजा दण्ड नहीं लगावेगा अग्नि उसके धन को नहीं जलावेगी चोर डाकू भी उसका धन नहीं लूटेंगे। जिन धर्मी पुरुषों का धन धर्म में लगता रहता है वह उत्तम पुरुष हैं धर्म में धन लग जाने से पुण्य ही शेष धन की रक्षा करता है। याते समाधान होकर धन को धर्म में लगाना चाहिये और सदा मान रहित रहना चाहिए। काहेते मान बड़ाई ऐसा गुप्त दोष है कि भगवान् की प्राप्ति में बाधा डालता है। याते मान बड़ाई का हृदय में आवेश न होने देना चाहिये। नाश रूप पदार्थों की मान बड़ाई करना वृथा है। मान और मोह से तप का नाश होता है और अपमान से और शारीरिक कष्ट से तप की वृद्धि होती है और क्षण भङ्गुर विषय भोगों से मन की तृप्ति होवे नहीं। जैसे अग्नि में घी पाने से अग्नि प्रज्ज्वलित होवे है तैसे विषय की प्राप्ति से मन की तृष्णा बढ़े है। जब ज्ञान से मन को ब्रह्म सुख मिलजाता है तब तृप्त होजाता है : जैसे हाथी की खूराक एक मन है यदि उस को एक सेर खूराक दीजावे तो वह तृप्त होवे नहीं। तैसे मन रूपी हाथी भी एक सेर खूराक की तरह चौदह लोकों के भोग से तृप्त होवे नहीं, जब पूरी खूराक ब्रह्म सुख मिलजावे तब मन तृप्त होजावे है फिर विषय सुख की इच्छा करे नहीं, परन्तु मन जीव का ऐसा बैरी है जो भजन से खाली छोड़ देने से भोगों की तरफ ही दौड़ता है याते मन से उलटा चलना चाहिये मन खोटे कर्म में गेर देता है याते मन को शीत, उष्ण, तृषा, क्षुधा आदि सहन कराना चाहिये और सदा जप, तप, विचार में लगाना चाहिये। मन

अहंकार को मित्र बनाकर अनेक अनर्थ करता है और स्त्री विषय के सम्बन्ध से बल, वीर्य, तेज, कीर्ती, पुण्य, आयु का नाश तत्काल हो जाता है। याते विषय भोग से बचना चाहिये और ब्रह्म चिन्तन से बिना एक क्षण भी वृथा ना जाने देवे जिस क्षण में मन ब्रह्म चिन्तन नहीं करता उस क्षण में अपने आपको मृत्यु के मुख में गेरता है। याते समाधान होकर अनात्म चिन्तन नहीं होने देवे याते श्रद्धा से विवधान रहित सदा ब्रह्म अभ्यास करना चाहिये काल रूपी सर्प ने जीव रूपी मेंडक को मुख में पकड़ रक्खा है जीव रूपी मेंडक भोग रूपी मच्छर की इच्छा करता है ये बड़ा आश्चर्य है। अज्ञानी जीवों को दुःख रूप विषयों में मुख की भ्रांति है और जैसे उल्लू को रात में दिन की और दिन में रात की भ्रांति है और जैसे पतङ्गे साक्षात् मृत्यु रूप दीप की शिखा और लालटेन आदि को सुख रूप मानकर जल मरते हैं, वैसे ही अज्ञानी जीव विषय भोगों को सुख रूप मानकर स्त्री आदि विषय के मोह वश होकर बारम्बार मृत्यु के मुख में पड़ते हैं। उनको परलोक का ज्ञान नहीं है यही लोक उनको दीखता है, भजन धर्म से शून्य होने से परमार्थ की बुद्धि नष्ट हुई रहती है जैसे पतङ्गे को सब जगह में अन्धकार ही दीखे है जहां दीपक आदि रोशनी होवे है वहां ही प्रकाश को सुख जानकर अग्नि में जले है, तैसे ही वहिर्मुख अज्ञानी जीव भी सर्व स्थानों में दुख ही दुख देखे है, और स्त्री, धन आदि विषय में ही सुख देखे है याते बारम्बार अज्ञानी जीव पतङ्गों की तरह क्षणभङ्गुर स्वप्न मात्र मिथ्या भोगों में प्रीति करते हुये मोह से राग द्वेष रूपी अग्नि में दिन रात जलें हैं शान्त कभी नहीं होवें हैं और जैसे कोई दयालु पुरुष पतङ्गों को मोह वश मृत्यु की तरफ जाने को देखकर उनको दुख से बचाने के हित से दीपक लालटेन आदि की रोशनी कम कर देता है अथवा रोशनी

बन्द कर देता है परन्तु इस तात्पर्य को ना जानते हुये पतङ्गे उलटे दुखी होते हैं और समझते हैं कि हमारी मनोकामना पूरी न हुई तो भी रोशनी के कम करने अथवा बुझा देने वाले पुरुष की तो उनपर बड़ी भारी दया ही समझी जाती है तैसे कंचन कामिनी आदि विषय के मोह से राग द्वेष रूपी अग्नि में अज्ञानी जीव रूपी पतङ्गे जल रहे हैं तिन के कञ्चन कामिनी आदि विषय भोग प्राब्ध वश ईश्वर की अ ज्ञा से कम हो जावे अथवा नाश हो जाने से जीव रूपी पतङ्गे तात्पर्य्य को ना जानते हुये दुखी होते हैं कि हमारी मनोकामना पूरी ना हुई। परन्तु उनके ऊपर दयालु परमात्मा की तो अत्यन्त दया ही है। काहेते विषय सुख के अभाव होने से राग द्वेष से रहित हुये सात्विकी पुरुष अधिक ईश्वर की भक्ति भजन करते हुये परमानन्द को प्राप्त हो जाते हैं। और जैसे कोई महान धूप कर तपा हुआ सर्प के फन की छाया में बैठ कर सुखी हुआ चाहे तो कभी नहीं होगा कष्ट ही पावेगा और आत्मज्ञान अथवा भगवान के भजनरूपी वृक्ष की छाया में निवास करने से तत्काल ही सुखी हो जावेगा जिन पुरुषों ने विषय की सेवना करी है सो परम दुख को प्राप्त होते हैं। मूर्ख का मन तृष्णा कर के विषय की तरफ ही धावता है शान्त कभी नहीं होता जिससे अनेक जन्म दुःखों को प्राप्त होता है,चाहे आकाश में तारे गिने जायें तो गिने जाएं परन्तु तृष्णावान पुरुष के जन्म और दुखों का अन्त नहीं आयेगा। जहां जहां तृष्णा है तहां तहां ही दुख है। वैराग्य और सन्तोष से तृष्णा इच्छा आदि का अभाव होवे है। और तृष्णा इच्छा आदि ही दुखों का मूल है और आत्मा को आवरण करे है (अर्थात् ढके है) याते तृष्णा इच्छा आदि दुख की निवृत्ति के लिये वैराग्य और सन्तोष का सदा सेवन करना चाहिये और जिज्ञासु उपवास आदि से इन्द्रिय निर्बल करते हैं, काहेते

इन्द्रिय निर्बल होने से विचार का बल हो जाता है, परन्तु सात्विकी पुरुषों को शारीरिक कष्ट से पूर्व कृत पाप भुगत जाने से बुद्धि शुद्ध होवे है विचार और निर्माणता आदि दैवी गुण बढ़े हैं। याते शरीर का कष्ट भी सात्विकी पुरुषों के तप के समान है और जैसे रात से दिन आ जाता है और दिन से रात आ जाती है। जैसे ये चक्र बिना यत्न से चलता रहता है तैसे दुख से सुख आ जाता है और सुख से दुख आ जाता हैं। यह चक्र भी दिन रात की तरह बिना यत्य से चलता ही रहता है परन्तु विचार करके देखिये तो विषय सुख से दुख श्रेष्ट है, जीव का परम मित्र है जिसके आने से नम्रता, वैराग्य, नाम जपना, दान करना आदि शुभ गुण स्वाभाविक ही आ जाते हैं और विषय सुख शत्रु है जिसके आने से काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि आसुरी गुण हृदय में प्रवेश कर जाते हैं और यहां अत्यन्त कष्ट देते हैं परलोक में नर्क में गेर देते हैं याते इन्न्द्रियों के विषयों की इच्छा करने वाले जीव सदा दीन रहते हैं, शांत नहीं होते। याते भोग ईच्छा बन्धन का कारण है और दुख जीव का परम मित्र है जिसके आते साथ ही काम, क्रोध, अहंकार आदि सब शत्रु भाग जाते हैं याते जीव का दुख रूपी मित्र बड़ा बलवान है जो नर्क में गेरने वाली खोटी विषय वासनाओं को भगा देता है और सुख रूप शुभ वासना को प्राप्त करता है और इन्द्रियों के विषय सुख तो बड़े यत्न से प्राप्त होवें हैं और जीव का दुख रूपी मित्र ऐसा परोपकारी है कि बिना यत्न से बिना इच्छा के अपने आप आ जावे है और दोनों लोक के सुख देने वाले शुभ गुण साथ ही लावे है याते दुख बड़ा परोकारी जीव का परम मित्र है जो नर्क से बचा लेता है और वैराग्य द्वारा परमानन्द की प्राप्ति करा देता है।

दोहा—सुख के मांथे सिल पड़े, जो नाम हृदय से जाय ।
बलिहारी जाइये दुखसे, जो पल २ नाम जपाय ॥१

सुख में सौ सौ दुःख हैं, दुख में सौ आनन्द ।
दुख से जब ये हित करे, छूटें सगले बन्ध ॥२

दुखकी निन्दा मत करो, दुखिया स्वर्ग में जाय ।
दुख ना होते जगत में, जाते नर्क सबाय ॥३

दुख में सिमरण सब करें, सुख में करे न कोय ।
जो सुख में सुमरण करें, तो दुख काहे को होय ॥४

दुःख क्लेश और आपदा, परमानन्द निधान ।
भक्ति, अरु, निर्माणता, इनके अन्तर जान ॥५

(अर्थ स्पष्ट है)

किसी समय में भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र जी ने कुन्ती को कहा वर मांग, तब कुन्ती बोलती भई हे भगवन् ! दुखों की वर्षा होती रहे काहेते आपका नाम नहीं भूलेगा सदां यादगीरी बनी रहे गी। तब भगवान् कहते भये वर मांग तब सुभद्रा बोली कि हे भगवन् ! एक समय भोजन खाने को मिले सो भो पूर्ति का ना मिले, भूख ही रहे काहेते आपका नाम सदां स्मरण रहेगा, तब भगवान् ने ऐसा ही वर दिया। विचार करना चाहिये सात्विकी पुरुषों को दुख और गरीबी ही सुख समान प्यारी हैं जिस से परमात्मा की भक्ति होवे है जिस भक्ति से परमानन्द की प्राप्ति होवें हैं। राज के मद से, और धन के मद से तथा मान के मद से भक्ति होवे नहीं, उलटा आसुरी काम,

क्रोध, आदि बढ़ने से पाप ही होवे है गरीबी से ही कल्याण होवे है। बाहर अन्दर संग्रह से रहित और नम्रता और भक्ति भजन में प्रेम होना ये सात्विकी गरीबी है अथवा ईश्वर की कृपा से हृदय में गरीबी का निवास होना ही सात्विक ग़रीबी है। ऐसी ग़रीबी से सर्व विरोध मिट जाते हैं और परमानन्द की प्राप्ति होवे है और तीन वस्तु प्राप्त हो जावे तो सात्विकी पुरुष को ऐसा सुख होवे है जो ऋद्धियां सिद्धियां से ऐसा सुख होवे नहीं। (१) अज्ञात देश की प्राप्ति (२) ग़रीबी होनी (३) मनुष्यों से अपमान होना, इन तीनों से भगवान का बारम्बार सुमरण होवे है और गरीबी रूपी तीर से काम, क्रोध, अहंकार आदि विकार ऐसे भाग जाते हैं जैसे गुलेल से कौवा भाग जाता है। तब रजो, तमो से रहित सतो प्रधान होने से भजन विचार में मन तत्पर लगा रहता है।

शास्त्र में तो गरीबी की ही महिमा कही है और शील स्वभाव के प्रभाव से इन्द्र को इन्द्र पदवी मिली है। नम्रता के बिना रावण आदि अहंकारी राजों के राज्य नष्ट हो गये और नम्रता के प्रभाव से विभिषण और प्रथु आदि राजों को राज्य प्राप्त हुये हैं। नम्रता से जप, तप, दान आदि सर्व साधन सफल होवें हैं, नम्रता से ही जैकार होवे है याते नम्रता ही बढ़ाने का साधन करना चाहिये, काहेते कटुवाक्य बोलने वाले के पुन्न कटुवाक्य सहन करने वाले के पास चले जाते हैं याते हितकारक मधुर और सत्य वाक्य बोलना चाहिये। काहेते मधुर वाक्य के तुल्य करामत भी नहीं है याते हे तपस्वी जी! ईश्वर की आज्ञा से प्राप्त हुई ग़रीबी और दुख तिसको सात्विकी पुरुष परमसुख रूप जानकर प्रसन्न होते हैं और जैसे शरीर के रोगकी निवृत्ति के लिये और आरोग्यता की प्राप्ति के लिये कड़वी दवाई

का सब लोग सेवन करते हैं, तैसे सात्विकी पुरुष भी पूर्व के पापों की निवृत्ति के लिये और भजन विचार की प्राप्ति के लिये गरीबी और शारीरिक कष्ट को अमृत रूप जानकर ग्रहण करते हैं। और भजन विचार में तिनको अति प्रेम है उनके हृदय में सदा सुख ही सुख रहता है चिन्ता, शोक उनको कभी होता ही नहीं और परमानन्द को प्राप्त हो जाते हैं। हे तपस्वी जी! भगवान को भक्ति ही प्यारी है और भक्ति गरीबी से होवे है याते ग़रीब का ही दान और भजन फलीभूत होवे है।

तपस्वी का वचन

गरीब का दान किस प्रकार फलीभूत होवे है इसमें कोई उदाहरन कहिये।

बहन का वचन

हे तपस्वी जी! उदाहरण सुनोः किसी समय श्री गङ्गा जी का पर्व था तब एक शहर के सब लोग स्नान करने गये और शहर का राजा भी जाता भया। तब सब लोगों ने श्री गङ्गाजी के तट पर दान किया राजा ने तो लाखों रुपये का दान किया, उसी शहर का एक ग़रीब घास बेचकर गुज़रान करता था तिसके पास कुल चार आने थे और कुछ नहीं था उसने चार आने ही दान करदिये तब सब लोग वापिस शहर को जाते भये। तब भगवान की कृपा से सब के ऊपर बादल की छाया साथ जारही थी, तब लोग कहने लगे राजा ने और सेठो ने बहुत दान किया है इस कारण ऊपर छाया हो गई है और वह गरीब जिसने चार आने दान किये थे, वह थोड़ी दूर कुएं से जाकर पानी पीने लगा, तब छाया तो उस के ऊपर होगई, लोगों के ऊपर धूप रह गई, तब लोगों को यह निश्चय हुआ कि इस ग़रीब का दान

फलीभूत हुआ है और किसी के दान का पुण्य इतना फलीभूत नहीं हुआ। जब वह गरीब पानी पीकर लोगों के पास आया तो छाया उसके ऊपर चली आई तब राजा आदि सब लोगों ने उस गरीब को नमस्कार करी काहेते कि उस दान के पुण्य का उसके मुख पर प्रकाश चमक रहा था, तब सब लोग कहने लगे हे भगत जी! तुमने क्या दान किया है जो भगवान् तुम्हारे ऊपर बड़ा प्रसन्न हुआ है तब ग़रीब ने कहा कि हमारे पास चार आने थे भगवान् की प्रेरना से सोई दान कर दिये हमारे में तो दान करने की कुछ भी शक्ति नहीं है, तब राजा ने कहा हे भगत जी! तुम धन्य हो जो मज़धूरी करके तुम ने सर्वस्व दान किया है। इस कारण तुम्हारे ऊपर भगवान जी ने प्रसन्न होकर बादल की छाया करी है। तब बहन कहती भई। हे तपस्वी जी! इस प्रकार उस ग़रीब पर राजा और सब लोग प्रसन्न होते भये। इस लिये गरीब का दान सफल होवे है। याते भजन भी सात्विकी ग़रीबों का ही फलीभूत होता है प्रत्यक्ष देखिये सन्तोषी महात्मा भिक्षा बृत्ति से शरीर का निर्वाह सुख से करते हुये भजन विचार से परमानन्द को प्राप्त होगये याते हे तपस्वी जी! ये सर्व जगत स्वप्न समान हमारे को मिथ्या निश्चय होने से भाई की मृत्यु सुनकर मोह शोक नहीं हुआ। तब तपस्वी धन २ करता हुआ लड़के की मां के पास जाता भया क्योंकि मन में बिचारा कि मां को पुत्र बहुत प्यारा होता है। इसलिये माता को जरूर मोह होगा याते माता की परीक्षा करनी चाहिये।

तपस्वी का वचन

**दोहा—माता तुमको बिपत अति, सुत खायो मृगराज।**
**हमने भोजन ना किया, तिस मृतक के काज॥**

अर्थ—हे माता जी तुम्हारे को बहुत विपता पड़ी है। तेरे बेटे को मृगों का राजा जो शेर है तिसने मार डाला है हमने इसी कारण से आज भोजन भी नहीं पाया।

माता का उत्तर

**दोहा—एक वृक्ष डालां घने, पक्षी बैठे आय।**
**पोह फाटी पीली भई, उड़ २ चौदिश जाय॥**

अर्थ—हे तपस्वी जी! जैसे एक वृक्ष पर पक्षी बैठ कर रात काट कर चले जाते हैं, तैसे ही यह घर एक वृक्ष है तिस में पक्षी रूपी सम्बन्धी इकट्ठे होकर अपनी २ आयु कर्म भोग कर अपने २ कर्म के अनुसार बिछड़ जाते हैं, इस से मोह करना वृथा है।

तपस्वी का वचन

माता जी! ऐसे सुन्दर बेटे के मरने का कोई भी शोक नहीं करा शोक के न होने में कोई उदाहरन कहो।

माता का उत्तर

हे तपस्वी जी! उदाहरण सुनो जिसके सुनते ही मोह शोक निवृत हो जावे है। हे तपस्वी जी! एक राजा था उसका सुन्दर लड़का युवा अवस्था में मृत्यु होता भया। तब राजा कचहरी बन्द कर के शोक मन्दिर में जा बैठा, तब लोग तारीखों वाले वापिस जाने लगे। तब एक माई ने लोगों को कहा कि मैं अभी राजा से कचहरी लगवाती हूं। तब वह माई राजा के पास शोक मन्दिर में गई और कहने लगी, हे राजन्! हमारी एक अर्ज़ सुनिये। मैं अपने भतीजे की शादी पर जाते वक्त पड़ोसिन से ज़ेवर (गहना) मांगकर अमानत लेगई थी, अब मैं शादी से घर में आई तो वह पड़ोसन अपना सब ज़ेवर मेरे से ले गई। अब मेरे को बहुत शोक हो रहा है, मेरे से क्यों ले गई।

ऐसी चिन्ता से मेरा मन दुखी रहता है। तब राजा ने कहा - अपनी अमानत उसने लेनी थी, तेरे को शोक चिन्ता कभी नहीं करनी तेरे को जेवर दे देने की खुशी करनी चाहिये। तब राजा को माई कहती भई, तुम्हारे को बेटा परमात्मा ने अमानत दिया था, अब उसने अपनी अमानत तेरे से वापिस ले ली है। हे राजा! अब तू बेटे की मृत्यु का शोक करके कचहरी बन्द क्यों करे बैठा है।

तब राजा को विचार हुआ कि यह सच्ची बात है कि सर्वराज आदि समाज परमात्मा की अमानत है जब चाहे अपनी अमानत ले सकता है, हमारा तो दुनियां में कुछ भी नहीं है। ऐसे वृथा ही मैं राज और बेटे का अहंकार करता था। ऐसा विचार करता हुआ राजा ममता रूप शोक से रहित होता भया क्योंकि ममता ही शोक का स्वरूप है। तब राजा ने गम से रहित होकर खुशी आनन्द से कचहरी लगाई और राजा ने सब कुछ भगवान् को समझ कर धर्म अर्पण अन्न का लङ्गर लगा दिया और श्रद्धा से निष्काम होके रोज़ ही भगवान का भजन करता भया तब माता तपस्वी को कहती भई कि हमारे पास बेटा परमात्मा की अमानत था उसने लेलिया है। हे तपस्वी जी! इस उदाहरण के विचार से हमारे को शोक नहीं हुआ। अथवा हे तपस्वी जी! इस प्रकार का एक प्रसङ्ग सुनो जिसके सुनते ही मोह निवृत्त होवे है। एक पण्डित था, लोगों को रोज़ ही कथा सुनाया करता था तिसका एक ही बेटा था, विद्या पढ़ा हुआ, बुद्धिमान, युवा अवस्था था। प्रारब्ध वश वह मृत्यु होता भया तब पण्डित बेटे के वियोग से चिन्ता करता हुआ निशदिन दुखी रहता था। तब भगवान की प्रेरणा से स्वर्ग से दो देवते उस पण्डित की चिन्ता रूपी दुःख की निवृत्ति के लिये, इस मृत्यु लोक में आवते भये। एक देवता ने किसान का स्वांग धार लिया, दूसरे देवता ने मुसाफिर का स्वांग धार

लिया तो पण्डित के पास दौनों आवते भये। तब किसान पण्डित जी को कहने लगा कि हे पण्डित जी हमने रास्ते में खेती बोई थी इस मुसाफिर ने चले आते हुये पांव से दबाकर खेती का नाश कर दिया है, हमारे को बहुत दुख हो रहा है इसका आप न्याय कीजिये। तब पण्यित जी कहते भये तुमने खेती रास्ते में क्यों बोई जो रास्ते में खेती होती है तिसका तो मुसाफिरों के पांवों से नाश होता ही है। तुम को दुख नहीं होना चाहिये, मुसाफिर ने तो रास्ते में चलना ही था। तब किसान ने कहा पण्डित जी! तुम्हारा बेटा भी तो मौत के रास्ते में ही था, उसने भी मृत्यु होना ही था तुमको भी बेटे की मृत्यु से दुखी नहीं होना चाहिये काहेते, यावत्, देवता, दैत्य, मनुष्य, पशु पक्षी आदि जीव मौत के रास्ते में हैं, सबको मौत मारती चली आती है बालक, युवा, वृद्ध जो जीव दीखते हैं सब को मौत नाश करेगी किसी को भी नहीं छोड़ेगी। याते पण्डित जी! तुम को बेटे के वियोग की चिन्ता त्याग के ईश्वर शरण होकर निशदिन भगवान का भजन करना चाहिये जिस करके उस लड़के का भी कल्याण होवे और तुम भी सुखी हो जाओगे। हे पण्डित जी! तुम्हारे को उपदेश करने क लिये हम दोनों देवते स्वर्ग लोक से आये हैं। तब पण्डित ने प्रसन्न होकर दौनों तेवताओं का पूजन किया, तब दोना देवते स्वर्ग लोक को चले भये। इस प्रकार देवताओं के उपदेश को पण्डित मन में विचार करता भया कि यह सच्ची बात है। बड़े बड़े राजे आदि सर्व प्राण-धारी मौत के रास्ते में हैं कोई भी मौत से नहीं बचेगा, सब जीव अपने २ कर्म के अनुसार मृत्यु हो जावेंगे। और हमारा भी मृत्यु अवश्य होगा। इसलिये लड़के की मृत्यु का शोक करना वृथा है क्योंकि मौत के आगे किसी का भी ज़ोर नहीं चल सकता याते दिन रात भजन ही करना चाहिये। जन्म, मरण, सुख, दुख, लाभ, अलाभ

सर्व बिहार ईश्वर की आज्ञा से होते हैं याते ईश्वर का हुक्म मानकर प्रसन्न रहना चाहिये। इस प्रकार पण्डित जी मन में विचार करते हुये शांति को प्राप्त हुये और सबसे उदासीन होकर मोह का त्याग करके सर्व विहार को छोड़कर ईश्वर परायण होते भये और लोगों को भी वैराग्य विषय में कथा सुनावते भये। हे प्यारे! सब का मुसाफिरों वाला मेल है एक दिन सबका परस्पर वियोग अवश्य होगा। याते हे मुसाफिरो भगवान का भजन ही दिन रात करना चाहिये यह अमूल्य समय जा रहा है धन भी एक रोज़ नहीं रहेगा स्त्री, पुत्र आदि सबका वियोग अवश्य होगा, अपने शरीर का भी मोह छोडकर भगवान् में ही प्रेम बढ़ाना चाहिये। कोई भी वस्तु साथ नहीं जावेगी। पुण्य, पाप ही जीव के साथ जावेंगे। जिससे परलोक में सुख, दुख भोगेगा। इसलिये भजन से ही दोनों लोक में जीव सुखी होवेगा और कोई सुख का उपाय नहीं है। याते हे तपस्वी जी! इस प्रकार वैराग्य का लोगों को पण्डित जी उपदेश करते भये। जैसे पण्डित अपने बेटे को मौत के रास्ते में समझकर शांति को प्राप्त हुआ तैसे हमारा बेटा भी मौत के रास्ते में था, याते मौत ने मृत्यु करना ही था। हम और तुम ये सब जगत मौत के रास्ते में ही है याते सबको मौत नष्ट कर देवेगी किसी को भी नहीं छोड़ेगी काहेते यह मृत्यु लोक है। जैसे मिट्टी का कोट मिट्टी का ही स्वरूप है तैसे सम्पूर्ण मृत्यु लोक मृत्यु का ही स्वरूप है। काहेते क्षण क्षण में देखते देखते पदार्थों का नाश होता चला जा रहा है तो भी नाशवान पदार्थों में जीव राग द्वेष से परस्पर पाप करते हुये जल रहे हैं, यह सब मोह ही का प्रताप है और कुऐ में गिरने से चोट ना लगे तो ना लगे परन्तु राग से विहार में प्रवृत होने से क्लेश अवश्य होगा याते राग ही दुखों का कारण है। हे तपस्वी जी! एक सन्त नदी के किनारे पर भजन करता था तब एक भगत ने

कहा स्वामी जी जिस स्थान में आप कहो आपके लिये कुटी बनवादी जावेगी, तब सन्त ने एक पत्थर नदी में फैंका कि यहां कुटी बनाओ। तब भगत ने कहा यहां तो बड़े वेग से जल का प्रवाह चल रहा है यहां कैसे कुटिया ठहरेगी, तब सन्त ने कहा काल का प्रवाह तो इससे भी अधिक ज़ोर से चल रहा है और स्थान में कुटिया कैसे ठहरेगी। याते हम कुटिया नहीं बनवाते। हे तपस्वी जी! विचार करना चाहिये सात्विकी पुरुषों को प्रत्यक्ष काल ही वैराग्य को प्राप्त कर रहा है याते सब जगतकाल के मुख में होने से काल ही का स्वरूप हैं। इस विचार से हमको बेटे की मृत्यु सुनकर मोह शोक नहीं हुआ। अथवा हे तपस्वी जी! और विचार सुनो–असङ्ग रूपी शस्त्र से मोह रूपी संसार वृक्ष मूल सहित काटा जावे है।

### तपस्वी का वचन

हे माता जी! असङ्गता का क्या स्वरूप है जिससे मोह रूपी संसार वृक्ष काटा जावे है।

### माता का वचन

हे तपस्वी जी! असङ्गता दो तरह की है एक साधन रूप, दूसरी फलरूप सर्व व्यहार को ईश्वर का हुक्म जानना, जन्म, मरण, सुख, दुख, सब ईश्वर की आज्ञा में होते हैं, याते अहङ्कार से रहित होकर विषय और विषयी पुरुषों के संग का त्याग करके अभ्यास करना ये तो साधनरूप असङ्गता है और आप सहित सर्व जगत को ब्रह्मस्वरूप निश्चय करना और नाम, रूप प्रपञ्च का अत्यन्त अभाव निश्चय करना ऐसी समता अन्दर की फल रूप असङ्गता है अथवा बारम्बार ब्रह्मविचार करना ही अन्दर की असङ्गता है दृष्टा होके सर्व दृश्य को प्रकाशे है याहीते आत्मा असङ्ग है अथवा कल्पित की निवृत्ति अधिष्ठान का रूप ही होवे है। याते अद्वैत आत्मा असङ्ग है। और

विचार यह है:- जैसे पानी के घड़े में सूर्य्य का आभास होवे है घ
का पानी निकासने से वह आभास सूर्य्य में ही लय होवे है तैसे
भजन विचार से अनात्म चिन्तन बन्द होजाने से आभास ब्रह
साक्षी में अभेद होवे हैं याते अनात्म चिन्तन बन्द कहिये चित्त
निरोध ही समाधि है इस लिये वैराग्य और विचार से चित्त को सद
समाहित करना चाहिये और विचार ये है जैसे सफेद कागज प
अनन्त कालियां, पीलियां लकीरें होवें हैं यद्यपि कागज़ की सफ़ेदी स
लकीरों का आधार होने से अपरछिन्न है परन्तु लकीरों के सम्बन्ध
से कागज की सफ़ेदी भी लकीरों की तरह नाना परिछिन्न रूप हो
दीखे है। लकीरों की दृष्टी त्यागने से शेष अपरछिन्न कागज़ क
सफ़ेदी ही रहे है तैसे सर्व नाम रूप कल्पित का अधिष्ठान आत्मसत्त
है परन्तु नाम रूप अनन्त लकीरों का सम्बन्ध होने से अपरछिन्न
अखण्ड सत्ता भी नाना परिछिन्न की तरह होकर दिखाई देवे है
नाम रूप दृष्टि त्यागने से शेष केवल अपरछिन्न अद्वैत अखण्ड सत्त
ही परिपूर्ण रहे है और कुछ नहीं। याते हे तपस्वी जी ! इस प्रकार
अद्वैत आत्मा असङ्ग है याते आत्मा की असङ्गता का दृढ़ निश्च
रूपी शस्त्र से मोहरूपी संसार वृक्ष मूल सहित नाश हो जावे है।
अर्थात् आत्म समता रूपी असङ्गता के दृढ़ अपरोक्ष होने से अज्ञान
सहित अहंकार और संचित आदि कर्म और जन्म मरण मोह
आदि सर्व क्लेशोंका स्वपन से जाग्रतवत् अत्यन्त अभाव हो जावे है
याते हे तपस्वी जी ! इस प्रकार हमारे को आत्मा की असङ्गता का
दृढ़ निश्चय होने से कल्पित नाम रूप संसार संग क अत्यन्त अभाव
हुआ है इसलिये हमारे को बेटे की मृत्यु सुन कर मोह, शोक नहीं
हुआ। तब तपस्वी धन धन करता हुआ राजा के पास जाता भया और
मनमें सोचा कि राजा को ज़रूर मोह होगा राजा की परीक्षा करनी

करनी चाहिये। तब तपस्वी राजा के पास जाकर राजा को कहने लगा—

तपस्वी का वचन

दोहा-राजा मुख से राम कहो, पल २ घड़ी घड़ी।
सुत खायो मृगराज ने, कुटिया लोथ पड़ी॥

अर्थ—तपस्वी राजा को कहता भया, हे राजा! पल २ घड़ी घड़ी में राम का स्मरण कर क्योंकि तुम्हारे बेटे को शेर ने मार डाला है हमारी कुटिया के पास मुर्दा पड़ा है।

राजा का वचन

दोहा-तपिया तप क्यों छोड़िया, यहां पलक नहीं सोग।
बासा जगत सराय का, सभी मुसाफिर लोग॥

अर्थ—हे तपस्वी जी! आपने तप क्यों छोड़ दिया हमारे को तो किंचित भी शोक नहीं है, क्योंकि यह जगत सराय की तरह है। सर्व जगत के लोग मुसाफिर हैं, मुसाफिरों की सराय वाला मेला है। हे तपस्वी जी! सुपने की तरह सम्बन्धियों का संयोग है इस पर तेरे को एक उदाहरण सुनाता हूँ जिसके सुनते ही मोह शोक नष्ट हो जाते हैं। हे तपस्वी जी एक समय तीसरे पहर ब्रह्मचारी आगया पीछे और मुसाफिर धीरे धीरे आने लगे, सराय भर गई और सुबह को जाने लगे तब पहर दिन तक सब चले गये, तब वह ब्रह्मचारी जो पहिले आया था वह अकेला ही रह गया तब सराय खाली देखकर शोक करने लगा। जैसे उसका शोक करना वृथा है, तैसे ही यह सराय की तरह गृहस्थियों के घर हैं। सम्बन्धी रूपी मुसाफिर इकट्ठे होते हैं। पहिले एक दो सम्बन्धी रूपी मुसाफिर इकट्ठे होते हैं, फिर पुत्र पोत्र मुसाफिरों से घर भर जाता है। फिर माता पिता मुसाफिर जाने

जाने लगते हैं, ऐसे सम्बन्धी रूपी मुसाफिरों का संयोग वियोग होता रहता है, याते मुसाफिरों की तरह बेटे का वियोग हुआ है, शोक करना वृथा है क्योंकि स्वपन इन्द्र जाल की तरह यह सब संसार के व्यौहार हैं। अपना पूर्ण स्वरूप ब्रह्म, अजर, अमर, अखण्ड, नित्य चेतन, स्वयम् प्रकाश है। नाम रूप सब कल्पित हैं, इसी विचार से हे तपस्वी जी हमारे को शोक नहीं हुआ।

राजा कहता है, हे तपस्वी जी! मोह के त्याग के लिए और विचार सुनो।

**दो० बड़ा जाल यह मोह है, फ़से जीवन अनजान।**
**जिनके पुन्न निष्काम है, निकसे संत सुजान॥**

भाव यह है - कि मोह करके सर्व जीव कष्ट पा रहे हैं। स्त्री पुत्र के मोह करके दूसरे के धन की चोरी करता है और कैद भोगभा है मोह करके दूसरों की हिंसा करता है। स्त्री पुत्र धन के मोह करने से जीव अनेक पाप करता है और परलोक में नर्क भोगता है और कनिष्ट योनियों को प्राप्त होता है और जिन्हों ने पिछले जन्म में भजन नहीं किया और मोह आदि आसुरी गुणों से पाप कर्म करते हुये अब वही जीव पशु, पक्षी, कीट बन कर दीख रहे हैं। पाप के फल से सर्प कीट आदि निकृष्ट योनियां पाता है मोह से धन की तृष्णा करते हुये जीव परमार्थ नहीं कर सकते। तृष्णा के प्रताप से मृत्यु भी याद नहीं रही और भगवान को भी भूल गया मोह के प्रताप से धर्म से विमुख हुआ जीव कोई शुभ कर्म नहीं कर सकता। राग ही जीवों की मृत्यु है राग से ही रहित होना ही जीवन है और मोह रूपी तेल का कढ़ाह तपा हुआ है, जिसमें संसारी जीव मनुष्य, पशु, पक्षी आदि पड़े हुये दुख पा रहे हैं अथवा स्त्री, पुत्र, धन के राग रूपी अग्नि में जल रहे हैं। इस लिये मोह से जीव छूट नहीं सकते कोई सन्त महात्मा ज्ञा

से मोह का नाश करके मोक्ष पद को प्राप्त होते हैं। मोह महा अन्धकार रूप है। विचार के नाश करने हारा है। जिनके विवेक नहीं है सो पुरुष मोहे गये उनको परमार्थ भूल गया है जन्म भी दुख रूप है और वृद्ध अवस्था भी दुख रूप है पुनः पुनः मृत्यु भी दुख रूप है संसार सब दुख रूप है परन्तु आश्चर्य है मोह के वश होकर अज्ञानी जीव फिर भी संसार से प्रीति करते हैं। बारम्बार जन्म का दुख भोगते हैं और निकल नहीं सकते परन्तु कोई उत्तम पुरुष वैराग्य का अभ्यास करते हुये संसार की तृष्णा से रहित होकर बारम्बार सन्तोष को बढ़ाते हुये मोक्ष पद को प्राप्त हो जाते हैं।

**दोहा—सार वस्तु एक धर्म है, धारे पुरुष सुजान।**
**सुख पावे इस लोक में, होय दूर अज्ञान ॥**

जैसे हरिश्चन्द्र राजा ने पाप रूप मोह का त्याग किया है केवल धर्म परायण होकर राज को धर्म में दे दिया और काशी में जाकर आप स्वयं धर्मार्थ बिक गया। स्त्री पुत्र को भी बेच दिया अपने शरीर की और अपने स्त्री, पुत्र और राज्य आदि सबकी प्रीति छोड़ दी परन्तु धर्म से प्रीति नहीं छोड़ी। केवल धर्म में प्रेम होने से हरिश्चन्द्र को भगवान ने दर्शन दिया। यहां तक कि धर्म के प्रताप से राजा हरिश्चन्द्र का कुल कुटुम्ब परिवार सहित स्वर्ग में सुख भोग रहा है इस लिये संसार से प्रीति छोड़ कर धर्म में प्रीति करने वाले दोनों लोकों में सुख भोगते हैं और ज्ञान से मोक्ष पाते हैं।

जो पुरुष अपनी शक्ति से रोज़ ही अन्न का दान करते रहते हैं और भगवान के नाम का जाप जपते रहते हैं वह सदा सुखी रहते हैं क्योंकि अन्न का दान जज्ञ और जप यज्ञ जो भक्त रोज़ ही करते रहते हैं उनके पाप नाश होने से दुख नाश हो जाते हैं, दुख नाश होने से सदा सुख की प्राप्ति बनी रहती है।

दोहा—दुख जो देवे और को, भोगे दुःख जरूर ।
औरन को सुख देत जो, सुख भोगे भरपूर ॥

भाव यह है कि जो दूसरों को सुख देता है उसको स्वयम सुख मिलता है। जो दूसरे जीवों को दुख देता है वह स्वयम् दुख भोगता है इसलिये अपनी शक्ति के अनुसार दूसरों को सुख ही सुख देना चाहिये।

दोहा—बुरे वचन को त्या के, धारे मधुर स्वभाय।
राम नाम मन्त्र जपे, सहज मुक्ति हो जाय॥

मन वाणी शरीर से किसी की हिंसा न करनी चाहिये। ये परम धर्म है। जैसे कि अग्नि में पैर रखने से भय होता है उसी तरह पाप से डरते हुये पाप नहीं करते वह पुन्यात्मा पुरुष कहे जाते हैं पापकर्म के हृदय में दो ससकार होते हैं। एक दुख होना, और दूसरा पापकर्म करने की वासना उदय होनी। जो पुरुष दुख को कर्म का फल जानकर भोगते हैं और पाप वासना को सत्संग अभ्यास से निवृत करते हैं उन पुरुषों के पाप तो नाश होते जाते हैं और वह पुण्यकर्म का फल सुख भोगते हैं और जो पुण्य करने की वासना पैदा होने से पुण्य कर्म सत्सङ्ग द्वारा शीघ्र करलेते हैं उनके पुण्य पर्वत के समान बढ़जाते हैं तब उत्तमलोक में सुख भोगते हैं अथवा मोक्षपद को प्राप्त होते हैं।

और जो संसारी पुरुष सत्संग नहीं करते हैं उनके कुसंग के प्रताप से पुन्नबासना नाश होती जाती है पाप वासना से पाप कर्म बढ़ जाते हैं जन्म २ के पिछले पाप की प्रेरना से उसी पाप में लगे रहते हैं, जब पाप पर्वत समान बढ़ जाते हैं तब सर्प कीट आदि निकृष्ट योनियों को प्राप्त होते हैं अथवा नर्क भोगते हैं। तीर्थ यात्रा से, दान करने

से, नाम जपने से सर्व पाप नाश हो जाते हैं परन्तु मित्र द्रोही का पाप नाश नहीं होता और जो पुरुष दूसरों को अपना मित्र बनाकर फिर उसका बुरा करता है ऐसा मित्र द्रोही पुरुष एक हज़ार चौकड़ी युगों की नर्क भोगेगा। इसलिये उत्तम पुरुष पापों से भय करते हुये सत्सङ्ग द्वारा ऐसे पापों से बच जाते हैं इसलिये सत्सङ्ग भजन धर्म करते हुये उत्तम पुरुष मोह जन्य पापों से छूटकर दोनों लोकों में सुखी होते हैं। अथवा जो पुरुष दूसरे के कटुवाक् सहन करता है और आप कटु वाक् किसी को नहीं बोलता, और सत्य वचन मधुर बोलता है, और निष्काम राम का भजन करता है वह सहज ही मोक्ष हो जाता है।

दोहा—अनेक पिछले पुण्य से, पाया मनुष्य शरीर।
याते पुण्य कमाय जो, सुख पावे सो धीर॥

भाव यह है—कि विचार करके देखिये तो यह मनुष्य शरीर इन्द्रियां से सब समाज इस जीव को पिछले बड़े पुण्य से मिला है इसलिये मन आदि इन्द्रियों से पुण्य ही करना चाहिये जैसे बुद्धी पुण्य से मिली है, सदा ब्रह्मविचार ही करना चाहिये। अथवा धर्म का ही विचार करना चाहिये बुद्धि से अधर्म का चितवन कभी नहीं करना चाहिये बोलने की शक्ति पुण्य से मिली है इसलिये सच बोलना, मदुर वचन बोलना, नाम जपना चाहिये। बाणी से झूठ, निन्दा, कटुवाक्य कभी नहीं बोलना चाहिये और देखना की शक्ति पुण्य से मिली है नेत्रों से सन्तों के और मन्दिरों के दर्शन करने चाहिये और पर स्त्री को माता बहन के समान देखना चाहिये। कानों से शास्त्र का श्रवण करना और हरिकीर्तन का श्रवण करना चाहिये किसी की निन्दा श्रवण नहीं करनी चाहिये। हाथों से दान

करना, सेवा करके दुसरों को सुख देना चाहिये, हाथों से किसी को दुख न देना चाहिये। भगवान परायण होकर पांव से तीर्थ यात्रा करनी चाहिये और पांवों से चल कर खोटा कर्म नहीं करना चाहिये।

धन भी पिछले पुण्य से मिला है धन को धर्म में लगाना चाहिये धन को खोटी तरफ अधर्म में नहीं लगाना चाहिये क्योंकि जो जो सुख जीव को मिलता है पिछले पुण्य से मिलता है। जो जो दुख होता है पाप से होता है। इस लिये हे तपस्वी जी! जो उत्तम पुरुष हैं वह शरीर इन्द्रियों से पाप कर्म से बचकर पुण्य कर्म ही दिन रात संग्रह करते रहते हैं वह उत्तम पुरुष ज्ञान को पाकर मोह जाल से छूटकर परमपद को प्राप्त होते हैं इसलिये हे तपस्वी जी! ये संसार मिथ्या है।

**दोहा—मिथ्या सब संसार है, तीन ताप से ग्रास।**
**निश्चय त्यागन योग है, जिज्ञासू रहे उदास॥**

भाव यह है-कि यह कल्पित जगत तीनों तापों से ग्रसा हुआ है सर्व प्रकार से त्यागने योग्य है, इसलिये उत्तम पुरुष संसार से सदा उदासीन रहते हैं।

**दोहा—जब विचार कर देखिये, दुःख मूल अध्यास।**
**नाशे ब्रह्मज्ञात से, पाये मोक्ष पद खास॥**

भाव यह है-कि वास्तव में विचार कर देखिए तो शरीर का सम्बन्ध ही दुखों का कारण है। क्योंकि जैसे स्वप्न के शरीर के साथ जब सम्बन्ध होता है तब स्वप्न के सम्बन्धियों के साथ मोह खड़ा

हो जाता है तब यह जीव शरीर आदि स्वप्न के सम्बन्धियों से मोह कर के सम्बन्धियों के दुखों से दुखी होता है और क्षण मात्र में स्वप्न के संचित आदि कर्म खड़े हो जाते हैं और अनेक पाप पुण्य कर्मों का फल सुख दुख पाता है और जब अकस्मात से जागृत का बोध होता है तब स्वप्न शरीर के अभिमान निवृत होने से स्वप्न के शरीर आदि सम्बन्धियों के कल्पित दुखों से छूट जाता है तैसे ही अद्वैत सरूप सत्ता से सोया हुआ ये जीव देह में अभिमान करता हुआ देह के सम्बन्धी देखता है और देह सहित सम्बन्धियों का दुख ग्रहण करता है और स्वप्न की तरह क्षण मात्र में संचित क्रियमान आदि कर्म भी साथ भान होते हैं और मोह से पाप कर्म करता हुआ अनेक योनियों में दुखों का अनुभव करता है इसलिये अज्ञान कृत देह अध्यास ही दुखों का कारण है जैसे अग्नि के सम्बन्ध से शीतल जल भी तपायमान हो जाता है, तैसे शरीर के सम्बन्ध से देह के तापों कर जीव तपायमान होता है और जैसे अचल लोहा भी चुम्बक पत्थर के सम्बन्ध से चंचल हो जाता है तैसे अचल आत्मा में भी देह के सम्बन्ध से अज्ञान से दुखों का भान होने लग पड़ता है।

देह जड़ है, आत्मा चेतन है, देह परछिन्न दुख रूप है आत्मा व्यापक सुख रूप है, देह विकारी है, आत्मा वकारों से रहित है, तो भी देह के सम्बन्ध से जीव अपने स्वरूप में दुखों का आरोप करके दुखी होवे है, वास्तव में देह और आत्मा का कुछ भी सम्बन्ध नहीं, परन्तु स्वप्न के दुखों की तरह अज्ञान कृत देह का अभिमान ही दुखों का कारण है, देह अध्यास की निवृति अज्ञान की निवृति से होवे है। अज्ञान की निवृति स्वरूप के ज्ञान से होवे है स्वरूप का ज्ञान ब्रह्म विचार से होवे है ब्रह्म विचार ज्ञानवान की और सत शास्त्र की

सङ्गत से होवे है। इस प्रकार ज्ञान से देह अध्यास की निव्रति
जीव मोच्च हो जाता है।

**दोहा—जागे जैसे स्वप्न से, त्यों सरूप का ज्ञान।**
**सर्व दुखों से छूट के, पावे पद निर्वान ॥**

भाव यह है–जब अद्वैत स्वरूप का बोध होवे है तब उसी क्षण
स्वप्न से जागे की तरह सर्व देह आदि कल्पित बन्धनों से और ताप
से छूट जावे है। ना मेरी देह है ना मैं देह हूं, मैं बोध सरूप द्रष्टा पू
चेतन हूँ ऐसे विचार होने से गृन्थी निवृति होवे है तब अन्तःकर
मोह, शोक, धर्मों के सहित निवृति होवे है ना अपनी देह है ना औ
की देह है, देह आदि जगत साची द्रष्टा में कल्पित होने से आत्म
का ही सरूप है इसलिये आत्मा ही अपनी महिमा में स्थित है औ
कुछ नहीं ऐसा विचार जिस च्चण में होवे है उसी च्चण में प्रछि
अहंकार की निवृति से कल्पित संचित आदि कर्म भी निवृत हो
हैं और जन्म मरण आदि के भय से रहित होकर निर्भय होवे है
इसलिये अनेक युक्तियों से विचार ही सदा करना चाहिये। अ
विचार करने से शीघ्र पाप नाश होते हैं जैसे सूर्य के उदय से अंधक
का नाश हो जाता है।

और विचार से ही अद्वैत सरूप अपरोक्ष होवे है और द्वैत क
अत्यन्त अभाव होवे है फिर दुखरूप संसार खड़ा होवे नहीं इसलि
हे तपस्वी जी! समता का बारम्बार अभ्यास करने से अधिष्ठान
जगत का मिथ्या निश्चय रूप बाध होने से ज्ञान के प्रताप से वास
से रहित होकर सर्व आशा को पीठ देकर निरासता के सन्मुख हो
ही योग का और ज्ञान का फल है। ऐसी परम शांति को पाकर दे
आदि सम्बन्धियों के ताप रूप दुखों से हम तपायमान होते नहीं

क्योंकि पदार्थों में मिथ्या भावना करने से मोह होवे नहीं, मोह के न होने से इष्ट पदार्थों के और सम्बन्धियों के वियोग से तपायमान होवे नहीं इस प्रकार तपस्वी से राजा कहता है हमारे को बेटे की मृत्यु सुनकर विचार से मोह शोक हुआ नहीं, जैसे स्वप्न से जागे पुरुष को स्वप्न के इष्ट अनिष्ट पदार्थों में राग द्वेष होवे नहीं, तैसे हमारे को अद्वैत सरूप के बोध रूप जागृत से हर्ष शोक हुआ नहीं इस प्रकार राजा का विचार सुनकर तपस्वी बड़ा प्रसन्न होता भया। तब तपस्वी धन धन करता हुआ लड़के के भाई के पास जाता भया। तपस्वी मन में विचारता हुआ कि भाई की मृत्यु सुनकर भाई को अवश्य मोह, शोक होता है, इससे भाई की परीक्षा करनी चाहिये तब भाई के पास आकर कहने लगा।

तपस्वी का वचन

दोहा—सुनो राजकुमार तुम, अचरज की एक बात।
टूटो भुज तुम आज एक, हते सिंह बन आत॥

अर्थ हे राजपुत्र! अचरज की बात तेरे को सुनाता हूं, तुम्हारी आज दिन एक भुजा टूट गई क्योंकि बन के बीच शेर ने तुम्हारे भाई को मार डाला है।

भाई का वचन

दो० भाई भये अनन्त मम, कितने पीछे तात।
शोक करूं मैं कौन का, स्वप्ने सम जग जात॥

अर्थ—हे तपस्वी जी! पिछले जन्म में कितने ही भाई छोड़ कर आया हूँ अथवा सुपने के समान सब जगत नाश हो जाता है मिथ्या शरीरों का संयोग वियोग अवश्य होता है, हे तपस्वी जी! इस पर

उदाहरन सुनो जिसके सुनते ही मोह शोक नाश होवे है, एक आम का वृक्ष फलों से भरा हुआ था जो आंधी ज़ोर की चली तब आधे फल गिर पड़े और आधे खड़े रहे। तब उन गिरे फलों से एक फल वियोग से बोलता भया।

दो० फल गिरंता यह कहे, सुन तरुवर बन राय।
अबके बिछुड़े कब मिलें, करे न कोई सहाय ॥

अर्थ—वृक्ष को कहता भया, हे पिता तेरे से बिछुड़ा हुआ काल के मुख में अपने को देखता हूं। पशु, मनुष्य, पक्षी जो कोई मेरे पास आवेगा मेरा नाश ही करेगा। मनुष्य तो चूस चूस कर ही खतम करेंगे पक्षी टूक टूक कर मेरे को खतम करेंगे। और पशु तो एक बार ही मेरे को मुख में रख कर नाश करेंगे। इससे मैं काल के मुख में अपने को देखकर रुदन करता हूं।

दो० आगे तरुवर बोलदा, यह सब जगत सराय।
संयोग बिछोड़ा होत है, कर्म न मेंटा जाय ॥

अर्थ—वृक्ष कहता है भया हे बेटा! यह जगत मुसाफिरों की तरह सराय है, जहां २ संयोग होता है वहां वहां बिछोडा भी अवश्य होता है। बाप बेटे का, स्त्री पुरुष का, भाई भाई का अवश्य एक दिन बिछोड़ा होता है। मगर परमात्मा पिता से बिछुड़े हुये यह जीव सभी काल के मुख में हैं। जो भजन कर के परमात्मा के साथ मिल जाता है वह काल से बच जाता है। जो जीव परमात्मा से बिछुड़े हुये दीखते हैं सभी काल के मुख में हैं। वृक्ष फल को कहता भया—हे प्यारे पिछले जन्म भी हम तुम दोनों का मनुष्य के शरीर में बाप बेटे का संयोग था मगर वहां भी काल के वश से अपना दोनों का वियोग

होता भया। परन्तु मनुष्य जन्म दुलर्भ, मिला भी मगर व्यौहार की तृष्णा के प्रताप से सारी आयु पाप कर्म ही करते रहे और सोने, खाने में ही लगे रहे, झूठे कुटुम्ब के मोह से पाप बढ़गये, और पुण्य धर्म कुछ भी न हुआ। इस से हम तुम दोनों वृक्ष योनि में प्राप्त हुये हैं। और पूर्व संस्कारों के बल से हमारा तुम्हारा संयोग होके अब फिर वियोग हुआ है। अब हम दोनों को याद रखना चाहिये जब फिर मनुष्य जन्म मिले तो सावधान होकर भगवान का ही भजन करना चाहिये। जिस कर काल से बचकर परमानन्द की प्राप्ति होवे और सर्प, कीट, पशु, वृक्ष त्यादि खोटी योनियों से अपने दोनों का कल्याहोवे। परमात्मा का भजन करना और सन्तों की संगत से ही दुख योनियों से जीव छूटता है, और कोई उपाय छूटने का नहीं है। सत्संग ही सुख का मूल है और जो मूर्ख जीव भजन, सत्संग और धर्म से विमुख हैं वह इस लोक में भी दुख पाते हैं और परलोक में नर्क भोगते हैं। पाप कर्म करने वाले को खोटी योनियां मिलती हैं, और जो उत्तम पुरुष हैं वह तृष्णा से रहित सन्तोषवान हैं और धर्म परायण रहते हैं। वह ज्ञान को पाकर मुक्त होजावेंगे, खोटी योनियों से उनका कल्यान होवेगा। ऐसे पुरुष जगत में धन्य हैं। ऐसा विचार आम का वृक्ष अपने बेटे फल को कहता भया तब फल सुन कर धीरज को पाकर शांति को प्राप्त हुआ।

हे तपस्वी जी इतनी देर में वृक्ष के नीचे एक मुसाफिर आ गया वह फलों के वियोग की हालत देखकर बहुत अफसोस करता हुआ कहने लगा कि जितने गिरे हुये फल हैं यह दूसरे भाइयों से बिछड़ गये हैं अब इनका मेल नहीं होगा। गिरे हुये फलों को जीव खालेवेंगे ऐसे मोह करता हुआ वह मुसाफिर शोक को प्राप्त हुआ। हे तपस्वी

जी ! जैसे मुसाफिर का शोक करना वृथा है, तैसे मेरे को भाई का शोक करना वृथा है। माया रूपी वृक्ष के साथ अनन्त शरीर रूपी फल लगे हुये हैं, कर्म रूपी वायु से कई शरीर गिरते जाते हैं। कहीं कर्म वायु से पृथ्वी पर शरीर भ्रमते दीखते हैं। हे तपस्वी जी ! ऐसे विचार से हमारे को मोह शोक नहीं हुआ। तब तपस्वी धन-धन करता हुआ उसके मित्र के पास जाता भया और मन में विचार करता हुआ कि मित्र को मित्र की मृत्यु सुनकर ज़रूर मोह होगा, इससे मित्र की परीक्षा ज़रूर करनी चाहिये। तपस्वी मित्र के पास जाकर मित्र को कहता भया :-

तपस्वी का वचन

दोहा—मित्र तुम्हारा हत भया, सुत सिंहनी के हाथ।
भया अनर्थ यह आज ही, कांपत है मम गात ॥

अर्थ-तपस्वी कहता भया, शेरनी ने के बेटे शेर ने तुम्हारे मित्र को मार डाला है, यह आजही अनर्थ हुआ है। मेरा शरीर तो कांपता है, ऐसा आश्चर्य देख कर।

मित्र का उतर

दो॰ मित्र मुआ तो भला हुआ, गया स्वर्ग में खास।
हम तुम सब ही जांयगे, सब जप काल ग्रास ॥

अर्थ-यह सब जगत काल का गास है, जो दीखते हैं सब काल के मुख में हैं, कोई काल से नहीं बचेगा, हमारा मित्र तो भक्त था मुक्त हुआ है अथवा वह खास कर स्वर्ग में गया है। जैसे पुराना वस्त्र त्याग कर नया वस्त्र मिल जाने से खुशी होवे है। बहुत अच्छा हुआ हम भी उसको जा मिलेंगे। हे तपस्वी जी ! तुम शोक मत करो।

तपस्वी का वचन

तपस्वी कहता भया—ऐसे प्यारे मित्र की मृत्यु सुन कर तुमने शोक नहीं किया, तुम्हारा प्रेम झूठा है। मित्र कहता भया, हे तपस्वी जी! आप एक उदाहरण सुनो जिसके सुनते ही मोह, शोक नष्ट हो जावे है।

एक सन्त शहर में भिक्षा लेने को गया, तब एक माई दाने पीस रही थी उसको देखकर रोने लगा, और लोग इकट्ठे हो गये लोगों ने पूछा सन्त जी क्यों रोये जाते हो, तब सन्त कहता भया—जैसे यह माई दाने पीस रही है, तैसे भगवान् की कालरूपी चक्की बड़े ज़ोर से चल रही है तिसमें जीवरूपी दाने पीस २ कर नाश होते चले जा रहे हैं, कालरूपी चक्की मृत्यु को प्राप्त कर रही है सब जीवों को खत्म कर लेवेगी किसी को भी नहीं छोड़ेगी इस कारण से मैं भयवान होकर रोता हूँ, तब इतने में सन्त का गुरु ऊपर से आ गया। उसने चेले की हालत देखकर कहा कि हे शिष्य! जैसे चक्की की कीली के आसपास जो दाने आ जाते हैं वह दाने बच जाते हैं, तैसे ही जो जीव भगवान् की शरण में आ जाते हैं वह काल से बच जाते हैं, तैसे हे शिष्य! तू और मैं भगवान् की शरण में आये हुये हैं अपना असल जो चेतनस्वरूप है तिसकी काल कुछ हानि नहीं कर सकता, तू रुदन मत कर। तब उस सन्त का मन शांत हुआ और गुरु के साथ अपने आश्रम को चला गया, तैसे हे तपस्वी जी! जड़ शरीर के विनाश से आत्मा की कुछ भी हानि नहीं होती, जिन पुरुषों ने आत्म भगवान् की शरण ली है वह अमर हो जाते हैं। हमारी और मित्र की सदा आत्म भगवान् में स्थिति हैं, याते चेतनस्वरूप की काल से कभी हानि नहीं हो सकती, याते हमारा मित्र जीता है। हे तपस्वी जी! तुम शोक मत करो अथवा हे तपस्वी जी! भगवान् भक्तवत्सल हैं जो जीव भगवान् की शरण में आ जाता है उसकी भगवान् काल-

संकट से रक्षा कर लेते हैं। किसी समय एक मृगी को बन में कष्ट पड़ा तिसकी पुकार सुनकर तत्काल ही मृत्यु से भगवान् ने रक्षा करी।

तपस्वी का वचन

हे मित्र ! किस प्रकार मृगी को कष्ट पड़ा और कैसे भगवान् ने मृगी की रक्षा करी सम्पूर्ण वृत्तांत कहिये।

मित्र का वचन

दोहा—मृगी देखी एक बन में, गर्भ दिनन परमान।
हर्षित ब्याध होई है, साध्यो सारङ्ग बान ॥

चौपाई-पच्छिम दिशा जालको लायो, उत्तर दिशा सो अनल लगायो।
पूरब दिशा श्वान दृढ़ कीनो, दच्छिण दिशा खेंचि सर लीनो।
चारों दिशा मृगी फिर आई, कोई दिशा बिहीन न पाई।
पच्छिम गई जाल में पड़े, उत्तर जाय अग्नि में जले।
पूरब गमने श्वान पछारे, दच्छिण गई बधिक मोहि मारे।
प्रसूतकाल भी निकटे आनियो, उदरमांहि सो बिथा जानियो।
कृष्ण हरे मृगी ये भाखे, दीनबन्धु बिन कोई ना राखे।
तृण बन चरूं करूं जल पाना, अपनो मांस प्रिय सब जाना।
अहो कृष्ण ! सन्तन सुखकारी, दयासिन्धु मैं शरण तिहारी।
अब तुम दया करो जगनायक, येहि अवसर प्रभु होउ सहायक।

दोहा—घूमत है मन भंवर में, दुख की नदी अथाह।
चहुँ ओ संकट परयो, प्रभु जी करो सहाय ॥

चौपाई-जब इस भांति मृगी अकुलानी, दीनबन्धु यह रचना ठानी।
बन में मेघ घुमर कर आयो, वर्षा नीर तब अनल बुझायो।
पवन झोर से जाल उड़ायो, बाघ झपट श्वान को खायो।
ओले बरष व्याध सिर परियो, चहुँओर प्रभु रक्षा करियो।

दोहा-बरे ओले ब्याध सिर, झट निकसे तिस प्रान।
अनाथ नाथ रक्षा करी, आई शरण भगवान् ॥

भाव ये है—तपस्वी को मित्र कहता भया, एक मृगी हमने बन में देखी थी जिसका शरीर दुबला था और गर्भवती थी तिसके मारने को ब्याध ने चारों दिशा रोक लीनी। पच्छिम दिशा में जाल को लगा दिया, उत्तर दिशा में अग्नि लगा दी, पूर्व दिशा में कुत्ता खड़ा कर दिया, दक्षिण दिशा में ब्याध बाण खैंच कर खड़ा हो गया। मृगी बेचारी चारों दिशा फिर आई कोई स्थान निकलने को नहीं मिला जहां से निकल जावे तब मृगो विचार करती भई, कि प्रसूतकाल भी निकट आ गया है। पेट में पीड़ा हो रही है, इस प्रकार मृगी अति दुखी होकर अपने को काल के मुख में देखती हुई, केवल भगवान् की शरण होकर पुकार करती भई :-हे कृष्ण भगवान् मेरी रक्षा कीजिये मैं अनाथ आपकी शरण हूँ मेरा दुर्बल शरीर है। बन में घास खाकर जलपान करती हूँ। सब लोग अपने शरोर को प्रिय जानकर हमारे मांस खाने की इच्छा करते हैं। हे जगत के स्वामी! मेरे ऊपर दया करो, हमारा संकट निवृत करो। इस प्रकार मृगी दुख की नदी में डूबती हुई पुकार करती भई। तब दीनबन्धु भगवान् पूर्ण अविनाशी, घट घट बासी, ने ऐसा रचना रची, जिससे अग्नि शांत हो गई और वायु ज़ोर से चली, तब जाल उड़ गया और ब्याध के सिर पर ओले बरसने लगे, ब्याध मृत्यु हो गया और एक बघेरा आया वह कुत्ते को मार कर चला गया। इस प्रकार चारों तरफ से मृगी की भगवान् ने काल संकट से रक्षा करी। तब मृगी भगवान् का धन्यवाद करतो हुई प्रसन्न होकर बन में रहने लगी। तब मित्र कहता भया-हे तपस्वी जी! जो प्राणधारी जीव भगवान् की शरण में आ जाता है, अनाथों के नाथ भगवान् उसकी काल संकट से रक्षा

कर लेते हैं। याते हे तपस्वी जी! आर्त भक्त के प्रेम से सर्व पाप क्षणमात्र में नाश हो जाते हैं। जैसे गज की पुकार सुनकर भगवान् ने क्षणमात्र में सर्व पाप नाश कर दिये। और गज की ग्राह से रक्षा करी। याते हे तपस्वी जी! जैसे अग्नि से ईंधन का ढेर क्षणमात्र में जल जावे है, तैसे प्रेमरूपी अग्नि से सर्व पाप नाश होवे जावें हैं। जैसे साबुन से मैल नाश होवे है, तैसे प्रेम से पाप नाश होवे है। जैसे जल के प्रवाह से पृथ्वी का कीच मैला साफ हो जावे है, तैसे प्रेम के प्रवाह से क्षणमात्र में सर्व पाप नाश हो जावें हैं। और जैसे प्रकाश से अंधकार का क्षणमात्र में नाश हो जावे है, तैसे प्रेमरूपी प्रकाश से क्षणमात्र में पापरूपी अंधकार निवृत हो जावे हैं। याते हे तपस्वी जी! भगवान् की शरण होकर भगवान् में प्रेम बढ़ाना चाहिये।

तपस्वी का वचन

हे मित्र! कोई और उदाहरण सुनाइये, किस प्रकार ईश्वर शरण होकर 'प्रेम से सर्व पाप क्षणमात्र में नाश हो जाते हैं।

मित्र का वचन

हे तपस्वी जी! एक बड़ा भारी तपस्वी था। कैसा तप कर रहा था कि जिसके पांव ऊपर और सिर नीचे था। और वृक्ष के साथ बंधा हुआ था। तब एक रोज़ गोपियां भगवान् कृष्णचन्द्र जी के दर्शन के लिये जा रही थी। तपस्वी ने कहा! कि हे देवियो हमारी भगवान के आगे विनती कर देनी कि हमारी मुक्ति कब होवेगी? तब गोपियां भगवान का दर्शन कर पुनः तपस्वी की तरफ से भगवान के आगे बिनती करी तब भगवान बोले कि बीस लाख वर्ष ऐसा ही तप करता रहेगा तब मुक्ति पद उस तपस्वी को मिलेगा। तब वह गोपियां विचार करने लगीं कि तपस्वी को भगवान का हुक्म सुना

दिया तो तपस्वी मृत हो जावेगा, ऐसा विचार कर तपस्वी से थोड़ी दूर होकर जा रही थीं। तब तपस्वी ने उन्हें देखकर कहा हे देवियो हमारे वास्ते भगवान ने क्या हुक्म दिया है? तब गोपियां कहने लगीं आपके वास्ते भगवान ने बड़ा सख्त हुक्म दिया है इसलिये आपको नहीं बताया। तब तपस्वी कहने लगा हे देवियो जो कुछ हमारे लिये हुक्म हुआ है सो बता दीजिये। तब गोपियां कहने लगीं कि बीस लाख वर्ष ऐसा ही तप करना रहेगा तब मुक्ति होवेगी। ऐसा भगवान का हुक्म हुआ है। तब तपस्वी सुन कर अति प्रसन्न होने लगा। और शरीर में खुशी का जोश आजाने से तपस्वी के सर्व बन्धन टूट गये और पृथ्वी पर कूदने लगा। और भगवान के गुणानुवाद गायन करता हुआ महान प्रसन्नता से कहने लगा! बड़ा आनन्द हुआ कि मुक्ति पद मिलने का हुक्म तो हो गया। और हमारे को करोड़ों कल्प बीत गये, कनिष्ठ योनियां सर्प आदि में और बड़े २ भयानक मृत्यु के दुखों को भोगते भोगते। यह तो कुछ भी बात नहीं है, मैं बडी खुशी से ऐसा ही तप बीस लाख वर्ष भगबान की आज्ञा से ज़रूर करूंगा, तब भगवान् तत्काल ही तपस्वी के पास आ गये। और तपस्वी भगवान् के चरणों पर दण्डवत् प्रणाम करके बड़ा प्रसन्न होकर भगवान के गुणों की बारम्बार स्तुति करने लगा। तब भगवान तपस्वी पर प्रसन्न होकर तपस्वी को मुक्ति पद दे दिया, तब गोपियां भगवान की आश्चर्य महिमा को देखकर विन्ती करी। हे भगवन्! आपने अभी तो कहा था कि बीस लाख वर्ष तपस्वी तप करेगा, तब मुक्तिपद तपस्वी को मिलेगा। और आपने इसी वक्त तत्काल ही मुक्ति पद दे दिया। भगवन् आपकी महिमा बड़ी विचित्र है, तब भगवान् बोले कि जो बीसलाख वर्ष में तप करने से इस तपस्वी के पाप नाश होने थे, वह इसके 'अति प्रेम' श्रद्धा से क्षण मात्र में सर्व

पाप नाश हो गये। याते इस तपस्वी का हृदय पाप से रहित अति निर्मल हो गया है। इसलिये मुक्तिपद के योग्य होने से इसको तत्काल ही मुक्तिपद दे दिया है। तब मित्र तपस्वी को कहता भया हे तपस्वी जी! इस प्रकार 'प्रेम' रूपी अग्नि से पाप रूपी ईंधन क्षण मात्र में जल जावे है। याते भगवान में 'प्रेम' बढ़ाना चाहिये। और हे तपस्वी जी! इसी प्रकार एक माई कीड़ी थी, जो भगवान श्रीराम चन्द्र जी का आठों पहर भजन करती थी। तिसको एक समय महान कष्ट पड़ा और भगवान ने उसका कष्ट निवारण किया।

तपस्वी का वचन

हे मित्र! किस प्रकार माई कीड़ी को कष्ट पड़ा। और किस प्रकार भगवान् ने उसका कष्ट निवारण किया। सब वृत्तांत सुनाइये।

मित्र का वचन

**दोहा—माई कीड़ी राम का, मन से ध्यान लगाय।**
**अनंतलाल तिसको दिये प्रभुजी करी सहाय॥**

भाव यह है—एक माई श्रीरामजी' का भजन करती थी तिस माई का नाम कीड़ी था। तिस का एक बेटा था, वह भी भगवान् का भक्त था, और भजन करता था। एक दिन ज्योतिषी ने माई कीड़ी के बेटे के हाथ की रेखा देखी। तब ज्योतिषी को मालूम हुआ कि इस लड़के का राजा की लड़की के साथ संयोग है। तब ज्योतिषी ने राजा को जाकर कहा, कि कर्म की गति बड़ी विचित्र है. कि माई कीड़ी अति गरीब है तिसके बेटे का आपकी लड़की के साथ संयोग है। तब राजा ज्योतिषी की बात सुनकर बडा शोकवान हुआ और विचारने लगा कि गरीब माई के वेटे के साथ हमारी लड़की का संयोग हुआ तो हमारी बड़ी बदनामी होगी। याते कोई झूठा जुल्म लगाकर इन मां

बेटे को मरवा देना चाहिए। तब राजा ने मां बेटे को बुलाकर यह हुक्म दिया कि सुबह एक लाल हमारे को ला दो। अगर सुबह लाल नहीं लाओगे तो तुम दोनों मां बेटे फांसी दी जावेगी। तब ऐसा सख्त हुक्म सुनकर मां बेटा दोनों अपने घर आकर विचार करते भये। कि सुबह फांसी लग जाना है। एक रात की मोहलत मिली है। याते भगवान् का ध्यान ही करना चाहिये। तब दोनों मां बेटा भगवान् के आगे अनेक प्रकार से प्रार्थना करते हुये और सर्व दुनियां से उदासीन होकर अपने को मृत्यु के मुख में देखते हुये, भगवान् के ध्यान में निर्विकल्प हो गये, सारी रात दोनों की अचल समाधि लगी रही। तब ब्रह्ममुहूर्त के समय भगवान् उनको अति आर्त हुये ध्यान में मग्न देखकर उनके घर में अनन्त लालों का ढेर लगा दिया और इधर सुबह होने सार ही राजा वज़ीर को कहता भया तुम जाओ और उस मां बेटे को पकड़ लाओ, कि अब तक लाल नहीं लाये, उनको जल्दी फांसी दे दो। तब वज़ीर उनके घर आया तो क्या देखा कि मां बेटे को तो समाधि लगी हुई है और उनके घर में लालों का ढेर लगा हुआ है। एक-एक लाल करोड़ों रुपये का है। तब यह समाचार वज़ीर ने राजा को जाकर सुनाया तो राजा भी माई कोड़ी के घर जाता भया, और अनन्त लालों को देखकर भगवान् और भगवान् के भक्तों की महिमा गायन करने लगा। तब राजा अपनी जुल्मी की माई कोड़ी से माफी लेता भया और उसी वक्त माई कोड़ी के बेटे के साथ अपनी बेटी का विवाह करता भया। याते हे तपस्वी जी! इस प्रकार भगवान् के भक्तों के प्रेम बस हुआ क्षणमात्र में भक्तों के पाप और कष्ट निवारण कर देता है। जैसे प्रकाश से अंधकार दूर हो जाता है, तैसे प्रेम रूपी प्रकाश से क्षणमात्र में पाप निवृत हो जाते हैं और जैसे भूल से

अग्नि का स्पर्श हो जाय तो जला देती है, तैसे ही मलीन चित्त वाला भी भगवान का स्मरण करे तो उसके भी पाप शीघ्र ही नाश हो जावें हैं। याते ईश्वर शरण होकर नम्रभाव को धारण कर के भगवान में प्रेम बढ़ाना चाहिये। काहेतें राज आदि दुर्लभ नहीं हैं। प्रेम ही दुर्लभ है। काहेते संसार के पदार्थों में तो प्रेम सबका है परन्तु भगवान में प्रेम तो किसी भाग्यशाली पुण्यात्मा का ही होवे है। इसलिये प्रेम दुर्लभ है। यातें हे तपस्वी जी ! जैसे पानी के बिना मछली दुखी होवे है, तैसे नाम से बिना सच्चे प्रेमी बेचैन हो जाते हैं। याते जो सच्चे प्रेमी भक्त हैं, वह भगवान के भजन ध्यान में सदा मस्त रहते हैं। उनके हृदय में सदा सुख ही सुख रहता है। और परमानन्द भगवान की उन को प्राप्ति हो जाती है याते हे तपस्वी जी ! संसार से उदासीन होकर भगवान की शरण ही होना चाहिये।

दोहा—बाल युवा और वृद्ध को, है सबको अधिकार।
पचास वर्ष के बाद में, छोड़ सकल संसार ॥

भाव यह है—जो कोई भगवान् की शरण में आ जाता है, भगवान् उसकी रक्षा कर लेते हैं। इस लिये बालक को, युवा को और वृद्ध को, सबको ईश्वर शरण होना चाहिये। परन्तु पचास वर्ष के बाद में तो सर्व विहार को छोड़कर संसार से उदासीन होकर ईश्वर शरन ही होना चाहिये। काहेते ईश्वर शरण होने से जीव के पाप, दुख सब नाश हो जाते हैं। हे तपस्वी जी ! और विचार यह है कि वास्तव में तो आनन्द स्वरूप जीव आत्मा में कभी दुख का सम्बन्ध हुआ ही नहीं।

तपस्वी का वचन

यदि दुख सम्बन्ध से रहित जीव आत्मा आनन्द स्वरूप होवे

हो सर्वदा काल सुख ही होना चाहिये। सो सर्वदा काल सुख होवे नहीं।

मित्र का वचन

हे तपस्वी जी! विचार दृष्टि से जीव सर्वदा काल सुख स्वरूप ही है। दुख का सम्बन्ध कभी हुआ ही नहीं। परन्तु जैसे ज्वर दोष वाले पुरुष को मीठा गुड़ भी कटु भान होवे है, यद्यपि गुड़ सरूप से ही मीठा है, परन्तु ज्वर के दोष से कल्पित कटु भावना ने मधुरता को आच्छाद लिया! यह गुड़ है ऐसा तो भान होवे है, परन्तु मीठा भान होवे नहीं उलटा यह गुड़ कटु है ऐसा भान होवे है। और ज्वर का दोष निवृत होने सार ही वही गुड़ मीठे का मीठा ही भान होवे है। तसे जीव स्वभाविक ही सुख स्वरूप है परन्तु जिस हृदय में चिन्ता आदि विक्षेप दोष होवें हैं तिस हृदय में 'मैं दुखी हूं' ऐसा भान होवे है यद्यपि विक्षेप काल में भी सुख का अभाव नही हुआ, परन्तु कल्पित दुख की भावना से सुख आच्छादिया गया यद्यपि विक्षेप समय भी 'मैं हूँ' ऐसा सरूप का भान तो होवे है परन्तु सुख भान होवे नहीं, मैं दुखी हूँ, ऐसा भान होवे है जब वांछित विषय की प्राप्ति से अथवा अभ्यास से विक्षेप दोष निवृत होवे है तब चित्त समाहित काल में सरूप सुख का भान होवे है। मैं सुखी हूँ ऐसी प्रतीति से कल्पित दुख की भावन निवृत होवे है तब सरूप का सुख निरावर्ण होवे है परन्तु अज्ञानी को भ्रम से, अपने से, भिन्न विषय सें, सुख की प्राप्ति का अनुभव होवे है और ज्ञानवान को विचार से सर्वदा काल सुख सरूप का अनुभव होवे है अथवा हे तपस्वी जी! और विचार सुनो।

दोहा—घट में नभ ज्यों होइ है, ब्रह्म सुख मन मांहि।
चिन्तारूपी दुख ने, सुख आच्छादिया तांहि॥

नाम जपे भगवान् का, चिन्ता होवे दूर।
निरावरण सुख होइ है, मन में जो भरपूर ॥

भाव यह है—जैसे घट में आकश स्वभाविक ही भरा हुआ है तैसे मन में ब्रह्मसुख स्वभाविक ही भरा हुआ है। परन्तु घट में अनाज भर देने से घट का आकाश आच्छादिया जावे हैं जब घट से अनाज निकाल लिया जावे, तब घट का निरावरण होवे है तैसे स्वरूप सुख निराकार ब्रह्म भी मनरूपी घट के अन्दर बाहर स्वभाविक ही भरा हुआ है। परन्तु जिस काल में इच्छा का अथवा चिन्ता का मन में प्रवेश होवे है, तब स्वरूप सुख आच्छादिया जावे है और अभाव की तरह भान होवे है। मैं सुखी नहीं हूँ. मैं दुखी हूं. ऐसा प्रतीत होवे है। जब वांछित विषय की प्राप्ति से अथवा अभ्यास से चित्त समाहित काल में इच्छा अथवा चिन्ता के अभाव से स्वरूप का सुख निरावरण होवे है। 'मैं सुखी हूँ' ऐसी प्रतीति मन में होवे है परन्तु अज्ञानी अपने स्वरूप से भिन्न भ्रांति से विषय से सुख की प्राप्ति माने है तिसको क्षणिक सुख का लाभ होवे है। काहेते दूसरी वस्तु की इच्छा मन में होने से स्वरूप का सुख ढक जावे है और चित्त निरोध आदि से अभ्यासी पुरुष भी अपने से भिन्न सुख की प्राप्ति माने है, तिसको भी परिछिन्न सुख का ही लाभ होवे है। परन्तु राजे आदिकों से अभ्यासी पुरुष को अधिक ख का अनुभव होवे है और ज्ञानवान विचार से सर्वदा काल परिपूर्ण स्वरूप सुख का ही अनुभव करे है। विचार यह है जैसे बालक को भूषण दखे है सोना नहीं दीखे है और स्त्री को भूषण, सोना दोनों दीखें हैं। और सुनार को केवल सोना ही दीखे है यद्यपि भूषणों का कथन करता हुआ भी सुनार सोने को ही देखे है, भूषणों को नहीं देखे है। तैसे अज्ञानी

तो जगत को ही देखे है और जिज्ञासु जगत और ब्रह्म दोनों को जाने है और ज्ञानवान विचार से निरतिशय आनन्दरूप अद्वैत ब्रह्म को ही अनुभव करे है यद्यपि ज्ञानवान जगत का कथन करता हुआ भी जगत को नहीं देखे है, ज्ञानवान सर्वदा काल अद्वैत स्वरूप सुख का ही अनुभव करे है। याते हे तपस्वी जी! इस प्रकार विचार दृष्टि से जीव सर्वदा काल सुख स्वरूप ही है विक्षेप दुख अन्तःकरण के धर्म हैं, आत्मा के नहीं विचार ये है कि देवराज इन्द्र को भी ऐसा सुख नहीं होवे है, और चक्रवर्ती राजा को भी ऐसा सुख नहीं होवे है जैसा सुख राग से रहित मुनि, सन्त को एकान्त स्थान में निवास करने से होवे है अथवा जो पुरुष केवल भगवान् परायण सर्व इच्छा से रहित होकर एकान्त स्थान में भजन तत्पर करता है उसको इस लोक से लेकर ब्रह्म लोक तक सर्व सुख की प्राप्ति होवे है काहेते इच्छा के अभाव से सरूप सुख सदा निरावरण रहता है। हे तपस्वी जी! विचार से विक्षेप समाधि भी अन्त.करण के धर्म हैं, मेरे नहीं हैं। जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति आदि मन के धर्म हैं। अनुभव करने वाला सुख सरूप में आत्मा असङ्ग हूं। विचार ये है जैसे स्वप्न के राज का सुख जाग्रत के किंचित सुख के समान भी होवे नहीं। काहेते स्वप्न के राज सुख की अपेक्षा से जाग्रत का किंचित् सुख भी सच्चा है। तैसे इस लोक के सुख राज आदि ब्रह्म सुख की बूंद के समान भी नहीं हैं। काहेते स्वप्न समान इस लोक के सुख राज आदि मिथ्या हैं और जाग्रतरूप, ब्रह्म सतचित, आनन्द स्वरूप परिपूर्ण है। याते हे तपस्वी जी! जैसे स्वप्न से जागे पुरुष को स्वप्न के सम्बन्धियों के वियोग से मोह, शोक होवे नहीं, तैसे हमारे को अद्वैत स्वरूप के बोध रूप जाग्रत से स्वप्न के मित्र का वियोग होने से मोह, शोक हुआ नहीं। तब तपस्वी धन धन करता हुआ उसी कुमार के पास कुटिया

पर जाता भया और मन में सोच करता भया, लडके की परीक्षा के वास्ते ऐसा भयानक शब्द सुनाऊं जसके सुनते ही मोह के वश होकर रुदन करता हुआ ज़मीन पर गिर पड़े। तब तपस्वी जी ऐसा भयानक शब्द सुनावते भये।

तपस्वी का वचन

**दोहा—सुन नृप नन्दन बात मम, महा शोक की खान।**
**निकसो पीछे अग्नि से, भई कुटुम्ब की हानि ॥**

अर्थ—हे लड़के जिस वक्त तुम घर से निकले हो पीछे तुम्हारे महलों में आग लगी, तुम्हारा सारा कुटुम्ब जल गया है।

कुमार का उत्तर

**दोहा—जितने लोग कुटुम्ब सब, एक दिन बिछुड़न होय।**
**याते हम पहिले तज्यो, संग न करहूँ कोय ॥**

अर्थ—हे तपस्वी जी! कुटुम्ब के जितने लोग हैं सब नाविका के मुसाफिरों वाला मेला है, एक-एक करके संयोग होता है फिर कर्म से बिछोड़ा हो जाता है। ऐसे मुसाफिर रूपी शरीरों के वियोग से शोक करना वृथा है। मैं तो पहिले ही घर को छोड़ कर चला आया हूँ अब मैं किसी का संग भी नहीं करूंगा और कुटुम्ब का तो कभी स्मरणमात्र भी नहीं करूंगा।

तपस्वी का वचन

हे लड़के तुमने कुछ भी शोक नहीं किया तेरा कैसा पत्थर चित्त है।

कुमार का उत्तर

हे तपस्वी जी! शरीर सब नाश हो जाने वाले हैं और जो चेतन आत्मा है तिसका नाश नहीं होता अविनाशी आत्मा प्रकाशक और व्यापक है।

तपस्वी का वचन

आत्मा प्रकाशक तो है परन्तु व्यापक नहीं है।

कुमार का उत्तर

हे तपस्वी जी! जहां जहां प्रकाश प्रकाशित भाव होवे है, वहां वहां व्याप्य व्यापक भाव अवश्य होता है जैसे तेज़ प्रकाशक है रूप प्रकाश्य है, तेज व्यापक है रूप व्याप्य है वास्तव में विचार करके देखिये तो प्रकाश्य प्रकाशक भाव से रहित और व्याप्य व्यापक भाव से रहित जितने रूप हैं तेज मात्र हैं तैसे ही आत्मा प्रकाशक है दृश्य प्रकाश्य है आत्मा व्यापक है, दृश्य व्याप्य है। वास्तव में विचार करके देखिये तो प्रकाश्य प्रकाशक भाव से रहित व्याप्य व्यापक भाव से रहित जितना जगत दृश्य है एक आत्मा का रूप है विचार से जब ऐसे असङ्ग होता है तब शीघ्र ही शांति को प्राप्त होवे है और आत्मा सतचित आनन्द परितूर्ण है जिस में जगत कल्पित होने से आत्मा का ही रूप है।

दपस्वी का वचन

अपने से भिन्न जगत सत भान होता है।

कुमार का उत्तर

हे तपस्वी जी! अज्ञान से जगत सतभान होता है विचार करके देखिये तो आत्मा से भिन्न जगत सत् होता तो आत्मा कभी न प्रकाशता क्योंकि आत्मा भी घटकी नाई परिछिन्न और जड़ हो जाता, आत्मा सर्व का ज्ञाता होने से चेतन्य और व्यापक है। याते हे तपस्वी जी! प्रकाशक आत्मा में नाम रूप जगत कल्पित होने से आत्मा का ही रूप है।

तपस्वी का वचन

आत्मा जगत की एकता में तुमने युक्ति कही सो ठीक है, परन्तु

कोई दृष्टांत भी कहना चाहिये।

कुमार का उतर

हे तपस्वी जी! आत्मा जगत की एकता में अत्र दृष्टांत सुनो-जैसे भूषण सोने में कल्पित होने से स्वर्ण का ही रूप है, तरङ्ग जल में कल्पित होने से जल का ही रूप है, अक्षर स्याही में कल्पित होने से स्याही का ही रूप है. शस्त्र लोहे में कल्पित होने से लोहे का ही रूप है। घड़ा मृतिका में कल्पित होने से मृतिका का ही रूप है, वस्त्र सूत में कल्पित होने से सूत का हीरूप हैं। सर्प रस्सी में कल्पित होने से रस्सी का ही रूप है। दीवार में चित्र कल्पित होने से दीवार का ही रूप हैं, ठूंठ में चोर कल्पित होने से ठूंठ का ही रूप है। सिप्पी में चांदी कल्पित होने से सिप्पी का ही रूप है। काष्ठ में कड़ी, किवाड़ तख्त कल्पित होने से काष्ठ का ही रूप हैं। गिलास, बोतल, चिमनी, कांच में कल्पित होने से कांच का ही रूप हैं। कनास्तर, डिब्बे, टीन में कल्पित होने से टीन का ही रूप हैं। तैसे नाम रूप सर्व जगत परमात्मा में कल्पित होने से परमात्मा का ही रूप हैं. इसलिये परमात्मा ही अपनी महिमा में स्थिति है और कुछ नहीं। और कुटुम्ब आदि लोग स्वप्न मात्र होने से मिथ्या हैं। इसलिये हे तपस्वी जी! हमारे को किसी के साथ मोह नहीं है। मेरे को सबसे वैराग्य हुआ है। क्योंकि वैराग्य का पुण्य सुख, राज, लक्ष्मी के सुख से अधिक महान है।

तपस्वी का वचन

राज, लक्ष्मी के सुख से वैराग्य का पुण्य, सुख महान अधिक है। यह कैसे जानना चाहिये।

कुवार का उतर

हे तपस्वी जी! ज्ञान, उपरति, वैराग्य ये तीनों जिसके होवें सो

पूर्ण पुण्य का फल है। और जिसके ज्ञान प्रबल है, वैराग्य, उपरति न्यून हैं वह उससे थोड़े पुण्य का फल है। और जिसके वैराग्य, उपरति है और ज्ञान नहीं है वह उससे भी थोड़े पुण्य का फल है। और जिसके ज्ञान, उपरति, वैराग्य तीनों नहीं हैं, सिद्धि और राज लक्ष्मी आदि प्राप्त हैं, वह उससे भी थोड़े पुण्य का फल है। और जिसके ज्ञान, वैराग्य उपरति, सिद्धि आदि नहीं हैं केवल राज लक्ष्मी प्राप्त है वह उससे भी थोड़े पुण्य का फल है। याते हे तपस्वी जी! इस प्रकार पुर्वोक्त विचार से राज लक्ष्मी आदि बूंद सुख से ज्ञान वैराग्य, आदि का महान अधिक समुद्र रूप अविनासी सुख होवे है, और विचार यह है राज लक्ष्मी तो पुवकृप प्रारब्ध से प्राप्त होवे है। पुरुषार्थ से प्राप्त होवे नहीं, और वैराग्य रूपी पुण्य सुख तो पुरुषार्थ से प्राप्त होवे है। याते वैराग्यरूपी पुण्य बढ़ाने के लिये सदा वैराग्य और अभ्यास का ही पुरुषार्थ करना चाहिये। काहेते वैराग्य ही तप है। याते वैराग्य विचार से वासना से रहित हुआ निर्भय होवे है, और ब्रह्मचर्य से अन्तःकरण सतो प्रधान होवे है। इसलिये ब्रह्मचर्य और ब्रह्मविचार का सेवन करता हुआ पूर्ण परमानन्द को प्राप्त होवे है। याते हे तपस्वी जी! चेतन से भिन्न यावत अनात्म जगत स्वपन समान मिथ्या है।

याते जो जो पुरुष ऐसे झूठे कुटुम्ब के मोह से व्यवहार में पाप छल करते हैं उनको परलोक में नर्क मिलता है और यहां दुख पाते हैं इसी से धन स्त्री के मोह से धर्म का नाश कर देते हैं। परन्तु वह भाई, मित्र, धन आदि परलोक में साथ नहीं जांयगे परलोक में तो पुण्य और पाप ही जावेंगे। (इस वास्ते जो धर्म की पालना नहीं करते कुटुम्ब की ही पालना पापसे करते हैं वह सदा दुखी रहते हैं और शान्ति के समान तप नहीं है। और दया के समान कोई धर्म नहीं

तृष्णा के समान कोई रोग नहीं है और सन्तोष के समान कोई सुख नहीं है और पाप पुण्य दोनों छिपाने से बढ़ते ही जाते हैं और प्रगट करने से घटते ही जाते हैं। इस से पुण्य को छिपाना चाहिये और पाप को प्रगट करना चाहिये और पाप का फल दुख जीव नहीं चाहते परन्तु पाप का त्याग नहीं करते कोई उत्तम पुरुष ही पाप का त्याग करता है और पुण्य का फल सुख तो सब जीव चाहते हैं, परन्तु पुण्य करते नहीं, कोई उतम पुरुष ही पुण्य करता है।

दो० रोटी देवे सन्त को, पुण्य गऊ सम जान।
खिलावे भोजन तृप्ति से, हज़ार द्विज तुल मान ॥

भाव यह है-जो गृहस्थी भिक्षु और सन्त का 'नारायणहरी' शब्द सुनकर के भिक्षा रोटी शीघ्रता से देता है और जो गृहस्थी आलस्य करके रोटी भिक्षा नहीं देता, ब्रह्मचारी, फकीर, भिक्षु और सन्त के निराश चले जाने पर गृहस्थी को पाप लगता है। जो गृहस्थी महात्मा को तृप्ति से भोजन खिलाता है उस गृहस्थी को हज़ार ब्राह्मण के भोजन कराने का फल प्राप्त होता है।

दो० सेवा श्रद्धा से करे, प्रसन्न होय नित सन्त।
कामधेनु सौ जानिये, सेवा फल अन्नत ॥

भाव यह है—गृहस्थी भक्त (श्रद्धा) प्रेम से महात्मा की रोज़ ही सेवा पूजन के समान फल प्राप्त होता है, इसलिये अपने कल्यान के वास्ते श्रद्धा पूर्वक महात्मा की सेवा और संगति करनी चाहिये।

दो० अतिथि सबका गुरु है, तिसकी करे जो सेव।
सुख पावे इस लोक में, अन्त मुक्ति को लेव ॥१

खाली जाय जिन घरों से, ब्रह्मचारी अरु सन्त।
घोर नर्क में पड़ेंगे, भोगें दुःख अन्नत ॥२

अर्थ स्पष्ट है।

जो पुरुष केवल अपने शरीर के सख के लिये दूसरों को दुख देते हैं वा पाप करते हैं, जैसे मांस आदि खाने के लिये जीवों का घात करते हैं वह पापी पुरुष खोटी योनियों को पावेंगे और नर्क का दुख भोगेंगे। जो पुरुष पराई स्त्री के साथ शरीर करके भोग भोगते हैं उनको परलोक में लोहे के तप्त थम्बे (खम्बे) के साथ लगाकर जलाया जाता है। जो पुरुष कर्ज़ लेकर नहीं देते उनको अगले जन्म में नारी, पशु, नौकर बनकर बदला देना पड़ता है, जब तक कर्ज़ का बदला नहीं दिया जावेगा तब तक नहीं छूटेगा। और जो पुरुष धन और कुटुम्ब को ईश्वर का जान कर सदा धर्म को पालते हैं, भगवान को प्यारा जानकर कुटुम्ब के साथ मोह नहीं करते और पाप से सदा बच जाते हैं और नाम में ही जिनकी प्रीति है वह दोनों लोकों में सुखी रहते हैं। जो धर्मात्मा पुरुष हैं वह इस लोक के विषयों में सुख का यत्न नहीं करते, केवल परलोक के सुख के वास्ते ही धर्म करते हैं तथा नाम जपते रहते हैं वह दोनों लोकों में सुख पाते हैं और जो लोग शरीर के सुख की कोशिश करते रहते हैं अर्थात् दुनिया के विषय सुख की चाह करते रहते हैं और सदा व्यवहारों का ही फिक्र करते रहते हैं और नाम नहीं जपते, परलोक नहीं सवांरते, वह दोनों लोकों में दुखी रहते हैं, याते इस लोक के सुख की इच्छा को त्यागकर परलोक के सुख के वास्ते ही पुण्य करना चाहिये, नाम जपना चाहिये जो पुरुष मोह में फंसकर पाप छल करते हैं वह पापी पुरुष हीरा जन्म को गवा कर चौरासी के चक्कर में आकर जन्मते मरते हैं। और जो

पुण्यात्मा पुरुष हैं वह धर्म के वास्ते पुत्र, स्त्री, धन से मोह नहीं करते, उनको धर्म ही प्यारा है। जैसे हरिश्चन्द्र राजे आदि अनेकों ही भक्त पुण्य परायण हो कर कुटुम्ब का मोह छोड़ कर धर्म की पालना करते रहे। उनकी कथा सुनकर पाप नाश होते हैं, क्योंकि धन की शक्ति, शरीर की शक्ति, बाणी की शक्ति, बुद्धि की शक्ति, परमात्मा ने जीवों को धर्म करने वास्ते, नाम जपने के बास्ते ही दी है इसलिये जीवों को धर्म करना और नाम जपना ही उचित है और सम्बन्धियों का संग त्याग कर ईश्वर परायण ही होना चाहिये। इस से हे तपस्वी जी! हम तो कुटुम्ब का मोह त्याग कर अपना स्वधर्म ब्रह्म परायण ही होवेंगे कभी इस झूठे कुटुम्ब का मोह न करेंगे क्योंकि मुसाफिरों की तरह सम्बन्धियों का मेला है, अब वियोग हो गया है तो हम क्या अफ़सोस करें। इस पर तुमको एक उदाहरण सुनाता हूँ। जिस के सुनते ही मोह, शोक सब निवृत हो जावे है।

एक बहुत बड़ा दरियाव था जिसमें नवका मुसाफिरों से भरी हुई थी, जल बहुत चढ़ा हुआ था और हवा भी बहुत ज़ोर से चल रही थी, दरियाव के बीच में जब नवका आई तब डूबने लगी। तब एक बड़ा पुरुष नबका से निकल कर तैर करके पार चला गया, पीछे से मुसाफिरों से भरी हुई नवका दरियाव में डूब गई तब जो मुसाफिर तैर कर निकल गया था उस को मुसाफिरों सहित भरी हुई नवका डूब जाने का कुछ भी अफसोस नहीं हुआ इसी तरह हे तपस्वी जी! यह घर के सम्बन्धी पिछले जन्म के अज्ञात मुसाफिर हैं, घर रूपी नवका धीरे धीरे बर गई अब संसार समुद्र बीच कर्म रूपी वायु से और काल रूपी गम्भीर जल में अग्नि के निमित्त से घर रूपी नवका सम्बन्धी रूपी मुसाफिरों करके भरी हुई एक समय ही डूब गई अर्थात् अग्नि के निमित से सारा कुटुम्ब जलकर नाश हो गया।

इस प्रकार मुसाफिरों की तरह झूठे कुकुम्ब के नाश होने से हमारे को शोक नहीं हुआ। हम तो पहिले ही घर से निकल आये अब मैं लोगों का संग नहीं करूंगा। और कुटुम्ब का कभी स्मरण ही नहीं करूंगा सदा आत्म भगवान् परायण ही रहूंगा और एकाएकी जीवन मुक्त होकर विचरूंगा। तब तपस्वी धन धन करता हुआ कहता है हमने एक एक की परीक्षा करी है। मगर यह निश्चय हुआ है कि मोहजीत राजा का सारा कुटुम्ब ही निर्मोही है। अब तपस्वी निराश होके भगवान् की स्तुति करता भया।

तपस्वी का वचन

दोहा—क्या राजा क्या रंक है, क्या तपी को मान।
जिन पर प्रभु कृपा करें, सो मूर्ति भगवान॥

अर्थ—तपस्वी कहता भया, हम तपस्या का क्या वृथा मान करें, चाहे राजा होवे चाहे कङ्गाल होवे, जिस पर भगवान कृपा करें, वह मोह रूपी जाल के दुखों से छूट जाता है। इस प्रकार मोहजीत राजा की कथा सम्पूर्ण हुई।

दोहा—आपे छन्द बनावता, आदे आप छपाय।
आपे छापे शोध के, आपे पाठक भाय॥
कृपा सिन्धु सब सन्त जन, कृपालु परम उदार।
भूल चूक जो हो कहीं, लीजे स्वयं सुधार॥

ॐ तत्सत् ब्रह्मअर्पणमस्तु

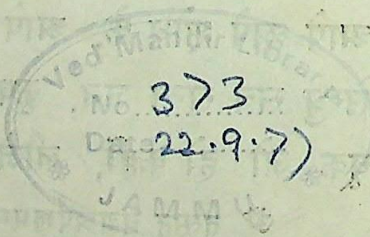
ओ३म् शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!!

# शुभ उपदेश

जो पुरुष अपनी कमाई के धन से ज्ञान वैराग्य की पुस्तक छपाकर अधिकारी पुरुषों को दान करें उन को महान पुण्य की प्राप्ति होती है, क्योंकि पूर्ण परमात्मा सर्व शक्तिमान के कीर्तन वाले ग्रन्थों से सर्व ज्ञान की प्राप्ति द्वारा अविनाशी सुख प्राप्त होवे है। इससे सर्व दोनों के बीच भक्ति ज्ञान के ग्रंथों का दान करना महान फल है। यदि सज्जन पुरुष परोपकार के वास्ते छपवायें तो छपवा सकते हैं।

दो० परउपकारी भक्त जो, गिल्लूमल परधान।
भगवत अर्पण ग्रंथ ये, लखे सो आतम ज्ञान॥





ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

# जिज्ञासू की प्रार्थना

दो० बारम्बार प्रणाम हो, सर्वज्ञ ईश अनूप ।
द्रष्टा सर्व अधार तू, प्रेरक चेतन रूप ॥१
अन्तरयामी सर्व का, सदा जीव के साथ ।
इच्छा पूर्ण कीजिये, आप सर्व के नाथ ॥२
कृपासिन्धु दयाल जी, ब्रह्म स्वरूप अपार ।
मुझ अनाथ की बीनती करो जगत से पार॥३
दुख रूप संसार यह जन्म-मरण की खान ।
आप निकासो दयाकर, देर न कीजे आन ॥४
परम पिता जी आप हो, सदा हमारे साथ ।
गिरा अनादि भूल से, कोई न पकड़े हाथ ॥५
दीजे बुद्धि विचार की, जानू अपना रूप ।
जन्म मरण से रहित जो, पूरण शुद्ध स्वरूप ॥६
चेतन ब्रह्म अपार जो, सर्व आधार अनन्द ।
शुद्ध बुद्ध से जानिये, लखे नहीं मतिमन्द ॥७
आठ पहर चिंतन करूं, बिसरे नहीं छन एक ।
भगवन् कृपा कीजिये, मन में होय विवेक ॥८